॥२१७॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

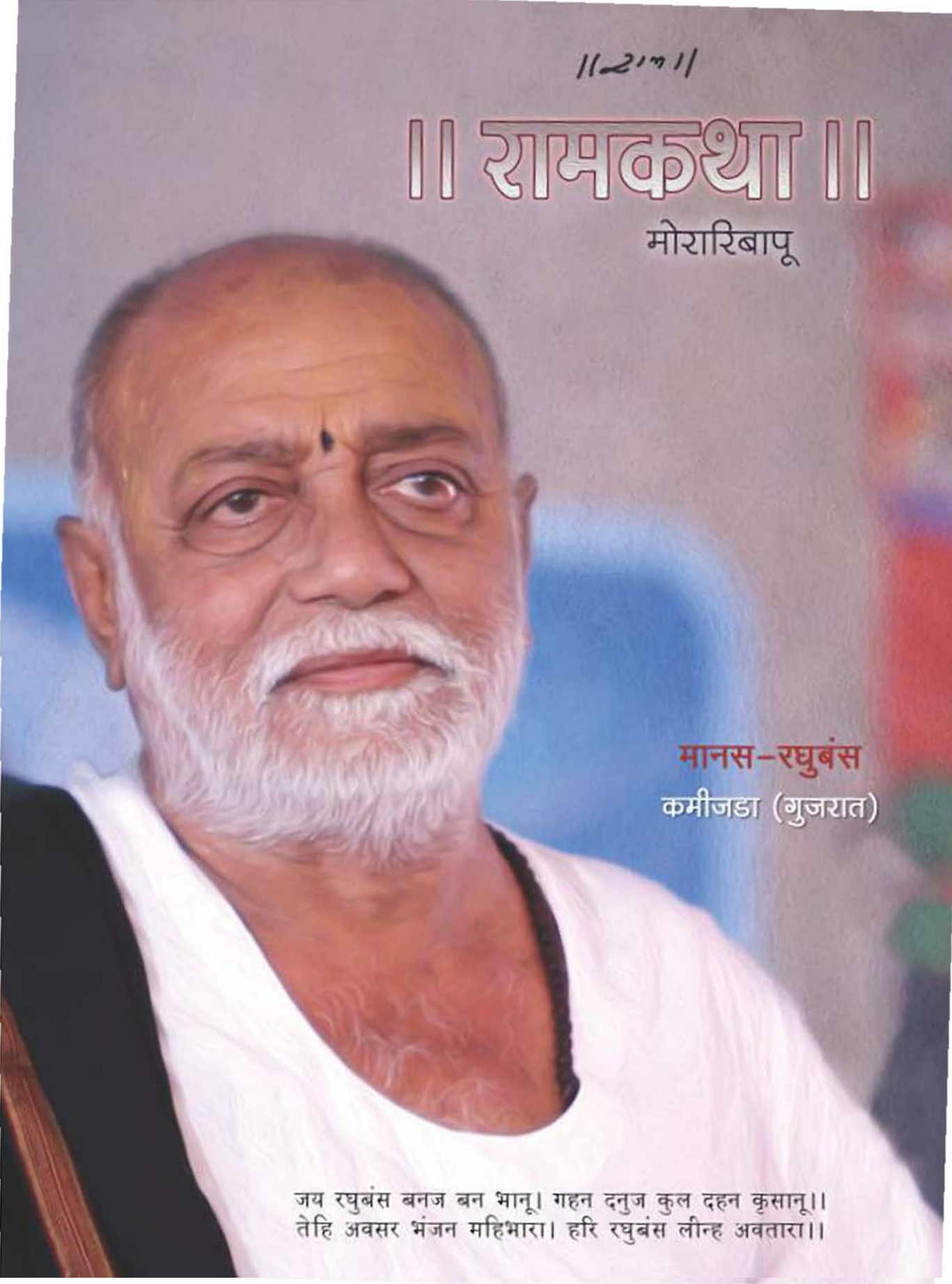

मानस-रघुबंस

कमीजडा (गुजरात)

जय रघुबंस बनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू॥
तेहि अवसर भंजन महिभारा। हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा॥

१. भाणसाहब की यह भूमि भजन की भूमि है।
२. भाणसाहब का वेदांत भजन के दह में स्नान करके निकला है।
३. रघुवंश में सादगीपूर्ण और गौरवपूर्ण जीवन की स्थापना है।
४. हम सब प्रकाश की संतान हैं।
५. धर्मगुरु पूज्य होते है, सद्गुरु प्रिय होते है।
६. अंधाधुंध अस्तित्व को कंट्रोल करने का काम बुद्धपुरुष करते हैं।
७. धीरता, वीरता और उदारता का संगम मानी रघुबंस।
८. एक आंख में तेज और एक आंख में करुणा यह रघुवंशी का लक्षण है।
९. राम रघुवंशी नहीं, रघुवंशमणि है।

|| रामकथा ||
मानस-रघुबंस
मोरारिबापू
कमीजडा (गुजरात)
दिनांक : १३-०२-२०१६ से २१-०२-२०१६
कथा-क्रमांक : ७८९
प्रकाशन :
जून, २०१७

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

हिन्दी अनुवाद
प्रो. कमल महेता

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने भाणसाहब की समाधिस्थली कमीजडा (गुजरात) में दिनांक १३-०२-२०१६ से २१-०२-२०१६ तक रामकथा का गायन किया। बापू ने भाणसाहब की इस भूमि को भजनभूमि के रूप में पहचान कराई और कहा कि मैंने अमरिका जैसी भोगभूमि में, रामदेवजी बाबा की पतंजलि पीठ की योगभूमि में और जहां चौबीस घंटे शोक है ऐसी शोकभूमि में भी कथा की है। परंतु भजनभूमि हो वहां मेरा खींचाव ज्यादा रहता है।

'मानस-रघुबंस' विषय पर कथा को केन्द्रित करते बापू ने 'रामचरित मानस' में निर्दिष्ट रघुवंशी के लक्षण बताने के साथ आरंभ में ही ऐसी स्पष्टता की थी कि यह कोई ज्ञाति की कथा नहीं है। यह भाणसाहब की परंपरा में आये एक साधु के तीस साल पहले के शिवसंकल्प को यह एक युवा साधु (श्री जानकीदासबापू) चरितार्थ करने जा रहे हैं, उसकी कथा है। तदुपरांत रघुवंश का सार्वभौम विचार आज इक्कीसवीं सदी में भी हमारे लिए कितना महत्त्वपूर्ण और प्रासंगिक है, उस पर भी बापू ने प्रकाश डाला।

तुलसीदासजी ने जनक की पुष्पवाटिका में भगवान राम द्वारा निर्दिष्ट रघुवंशीओं के लक्षण बापू ने उद्घाटित किये। जैसे कि जिनका मन कभी भी कुपंथ पर न जाय, सपने में भी परस्त्री का विचार न करे; जो दुश्मन को पीठ न बताए, सामने खड़ा रहे। कोई भी परस्त्री उनके मन को आकर्षित न कर सके। जिनके द्वार याचक कभी 'ना' न सुने। तुलसीदासजी ने अंकित किए रघुवंशी के लक्षणों का बापू ने संपूर्ण ब्यौरा दिया। और निष्कर्ष स्वरूप कहा, रघुवंशी की समग्र लाक्षणिकताओं का सारांश इतना है कि भगवान राम सीताजी को देखने के बाद भी विचलित नहीं हुए। सो उनमें धीरता है। राम ने यों कहा कि रघुवंशी कभी भी पीठ नहीं दिखाते। अत: उनमें वीरता है। याचक खाली हाथ नहीं जाए यह उनकी उदारता है। धीरता, वीरता और उदारता तीनों के संगम का नाम रघुवंश है।

बापू ने कवि कुलगुरु कालिदास के 'रघुवंश', 'वाल्मीकि रामायण' और मुख्यत: 'रामचरित मानस' के आधार पर रघुवंशीओं के गुण-लक्षणों का वर्णन-विवरण किया। 'रघुवंश' में बताए रघुवंश के सोलह लक्षणों का बापू ने परिचय दिया और 'रघुवंश' कथित आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दंडनीति जैसी रघुवंश साथ जुड़ी चार प्रकार की विद्या का भी 'मानस' की पश्चाद् भू में दर्शन कराये।

'राम रघुवंशी नहीं, रघुवंशमणि है। राम केवल रघुवंशी नहीं, रघुवंश विभूषण है; रघुवंश के नाथ है।' ऐसे सूत्रात्मक निवेदनों के साथ बापू ने राम के व्यक्तित्व को व्यापक फलक पर विस्तृत कर भगवान राम का महिमागान किया। राम किस तरह रघुवंशमणि, रघुवंशविभूषण, रघुवंशनाथ है, यह 'मानस' की चौपाइयों के आधार पर सिद्ध किया। बापू ने रघुवंशी समाज को मार्मिक संकेत भी दिया कि रघुवंशी होने का गौरव लीजिए परंतु रघुवंशी के लक्षणों में से थोड़े से भी हम में नहीं रहेंगे तो रघुवंश में जन्म लेने के बावजूद हम लघुवंश है, इस सत्य का स्वीकार करना होगा!

'मानस-रघुबंस' रामकथा निमित्त यों रघुवंश की उज्वल परंपरा का परिचय हुआ। और तुलसीदासजी के दर्शन समांतर कवि कुलगुरु कालिदास के 'रघुवंश' संबंधित विचारों से भी श्रोता लाभान्वित हुए।

-नीतिन वडगामा

भाणसाहब की यह भूमि भजन की भूमि है

जय रघुबंस बनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू।।
बड़भागी बनु अवध अभागी। जो रघुबंसतिलक तुम्ह त्यागी।।

बाप! परमात्मा की अहेतु कृपा से आज से रामकथा का आरंभ हो रहा है। तब सबसे पहले यह भजनभूमि, पूज्यपाद भाणसाहब की जीवंतभूमि, समाधि-स्थान को प्रणाम करता हूं। साहब-परंपरा को प्रणाम करता हूं। इस कथा को आशीर्वाद देने हेतु पधारे और शायद किसी नित्यकर्म के कारण से व्यस्तता को लेकर आशीर्वाद देकर जिन्होंने बिदा ली, जो विजय कर गए ऐसे जगद्गुरु १००८ रामानंदार्चा भगवान का स्मरण कर प्रणाम करता हूं। सभी संत, पूज्य चरण, अनंतश्री विभूषित महामंडलेश्वर पूज्य भारतीबापू और अन्य 'सर्वभूतहिते रत:।' लोककल्याण के कार्य में संलग्न परोपकारी धर्मसंस्था के सभी पूज्य महंतगण-संतगण आप सबको मेरा प्रणाम। तदुपरांत अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए गुजरात राज्य सरकार के वरिष्ठजन, मंत्री रजनीभाई, नीतिनभाई और उनके साथ पधारे हुए सभी का स्वागत करता हूं। इस रामकथारूपी प्रेमयज्ञ में पूज्य जानकीदास बापू के गुरुजी का मनोरथ आज साकार होने जा रहा है। इस मंगल कार्य में अपनी वित्तजा, तनुजा और मानसी सेवा का मन के सद्भाव से सेवा दी है ऐसे कथा के मुख्य यजमान कथा के निमित्तमात्र है, उनके परिवार के सभी सदस्य, अन्य छोटे आदमी से लेकर आप सभी इस सद्कर्म में संलग्न हुए हैं ऐसे सभी को व्यासपीठ पर से मोरारिबापू का प्रणाम।

जहां भी रामकथा होती है, मुझे प्रसन्नता होती है। परंतु इस रामकथा के साथ विशेष प्रसन्नता के कारण जुड़े हैं। अपने देश की राजधानी के राजघाट पर जागृत समाधि की कथा हुई। अब जीवंत समाधि की कथा है। यों समाधि से समाधि बीच में कोई उपाधि नहीं! यों सीधे आए हैं! इसकी प्रसन्नता है। कोई संत, साधु शिवसंकल्प करे, थोड़ा समय निकले पर जब इसका परिणाम आये तब एक साधु का मनोरथ पूरा होता है उसकी मुझे साधु के रूप में मेरी विशेष प्रसन्नता होती है। विशेष बात यह है कि किसी ग्रामप्रदेश में बिना पूर्वग्रह के कल्याण करने की इच्छा होती है, यह श्रद्धा है। किसी विशेष स्थान में कथा होती हो तब इतनी संख्या में संत-महंत पधारे, उनका दर्शन लाभ मिले और आखिर में मेरी व्यासपीठ से जुड़े हुए दुनियाभर के मेरे श्रोता, मेरे श्रावक भाई-बहन, मैं कथा गायन करूं और वे श्रवण करे इसकी भी प्रसन्नता है।

भाणसाहब की यह भूमि भजन की भूमि है। इसीलिए मुझे ज्यादा खींचाव है। क्योंकि मैंने तो भोगभूमि में कथा की है। अमरिका-ब्रिटन ये सब भोगभूमि है। योगभूमि में भी कथा की है। परमपूज्य रामदेवजीबाबा, उनकी पतंजलिपीठ, ये योगभूमि में भी कथा की है। चौबीस घंटे शोक है ऐसी भूमि में भी कथा की है। यह भाणसाहब की भजन की भूमि है इसकी प्रसन्नता है। मोरारिबापू कोई कथा निश्चित नहीं करते पर अस्तित्व की कोई चेतना कथा निश्चित करती है। इस साधु को धन्यवाद है कि उसने तीस बरस गिनाए। तीस बरस के बाद अस्तित्व हस्ताक्षर कर इस स्थान पर पुन: कथा करने के लिए कहती है। 'जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।' हम में से कोई भी नहीं थकेगा। यह थकान का स्थान नहीं है। जनम-जनम की थकान के विश्राम के ठिकाने हैं। ये संत हमारे सामने बोले न

बोले पर हमारे सामने मुस्कुराए। सद्भाग्य है कि संत हम पर स्नेहवृष्टि करते हैं। जो हमसे बड़े हैं वही स्नेह करते हैं।

मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। भाणसाहब की रामदुहाई इन्हें मिली। विश्व इतिहास में ऐसे प्रसंग नहीं होते साहब! पागलपन ही लगे! बुद्धिजीवियों को यह पागलपन लगे! पर ऐसा नहीं है। ये सुनिश्चित घटनाएं है। मैं सोचता था, कौन-सा विषय लूं? सोचा कि देहाती समाज है। एक-एक प्रसंग कहकर पूरी कथा कहूं। फिर सोचा कि आपके सामने 'मानस-रघुबंस' गाना है। 'रघुवंश' शब्द प्रयोग से किसी जाति का संबंध नहीं है। मैं किसी वंश का बारोट देव नहीं हूं। पर इस कुल में राघव का अवतरण हुआ है। तुलसी कहते हैं, 'जय रघुबंस बनज बन भानू।' रघुवंश के कमलबन का भानू, भाण। यह एक सतत स्मरण रहे, भाणबापा का इसलिए 'भानु' शब्द भी मैंने जोड़ा है। भाण माने सूर्य। जाति जरूर गौरव ले सके जो अपने को रघुवंशी कहलाते हैं। 'रामायण' ने रघुवंशी के सभी लक्षण बताए हैं। बारी-बारी से मैं भली-भांति समझाऊंगा। रघुवंशी को कितनी शर्तों का पालन करना पड़ता है? मैं वैष्णव साधुकुल में जन्मा हूं इसका मुझे कितना आनंद है? मुझे पता है, साधुता का निर्वाह कितना कठिन है! निरंतर जागृति रखनी पड़े। मुझे कालिदास के रघु को लाना है। तुलसी के रघुवंश की वाल्मीकि की रघु की बातें कर इस कुल में जन्मे महान प्रतापी संत की समाधि समक्ष मेरी वाणी को अधिक पवित्र करने का उपक्रम है। यह किसी जाति की कथा नहीं है। न तो किसी वर्ग की है। भाणसाहब की परंपरा में हुए एक साधु के तीस बर्ष पूर्व के शिवसंकल्प को एक युवा साधु चरितार्थ करने जा रहा है उसकी कथा है।

मैं तो सभी जातियां मिटाना चाहता हूं। पर्टिक्यूलर कितनी जातियों की कथा करूं? रामकथा में सभी जातियां आ गई। राजकोट में 'मानस-हरिहर' नाम से कथा की उसमें सब आ गई। पर यह परमतत्त्व राघवेन्द्र की कथा है। जो राम मेरे लिए ब्रह्म है। जो राम मेरा भगवान है। जो मेरा परमात्मा है। ऐसे परमतत्त्व राम का रघुकुल में प्राकट्य हुआ। इस रामकथा पर रघुवंश गौरव ले सकता है। पूज्य भाणसाहब के प्रति आप श्रद्धा के कारण संलग्न हुए। इस कुल ने काफी संत दिए हैं। सभी जातियों ने कोई न कोई महान पुरुष दिए हैं। इस समाज ने महान संत जलारामबापा दिया। हम सब गौरव ले सकते हैं। रघुवंश की कथा गाने से मेरी वाणी अधिक पवित्र होगी। पुनः दो पंक्तियों का स्मरण करें -

जय रघुबंस बनज बन भानू।
गहन दनुज कुलदहन कृसानू।।
बड़भागी बनु अवध अभागी।
जो रघुबंसतिलक तुम्ह त्यागी।।

प्रथम पंक्ति 'बालकांड' से ली है। परशुराम राम को जान जाने के बाद राम की स्तुति करते हैं। ऐसे परशुरामजी के शब्द है 'हे बनज बन भानू', आपकी जय हो। और दूसरी पंक्ति 'अयोध्याकांड' में माँ कौशल्या कहती है।

नौ दिन की कथा का यह केन्द्रीय विचार रहेगा। यह रघुवंश के सार्वभौम विचार इक्कीसवीं सदी में नई पीढ़ी के लिए महत्त्वपूर्ण विचार है। इसके लिए तोड़फोड़ कर मुझे प्लम्बरिंग का काम नहीं करना है। पर जो हकीकत है यह दिल से कहनी है। यह उपदेश नहीं है। इसका अधिकार परमात्मा ने आचार्यों और संतों को दिया है। हम इनके ऋणी है। यह मेरा आदेश नहीं है। वेद आदेश देते हैं। उपनिषद दे सके, महाकाव्य दे सके। तुलसी का संदेश लेकर विश्वभर में घूमता हूं। यह संदेश कभी सच्चे पत्ते पर पहुंच जाय तो थोड़ी ज्यादा प्रसन्नता होती है।

रामकथा धर्मशाला नहीं, एक संवाद है। रामकथा तलगाजरडा की प्रयोगशाला है। प्रयोग से परिणाम मिलता है। साल में एक बार 'वेलेन्टाइन डे' मनाया जाता है। 'प्रेमदिन' पाश्चात्य विचार है। भारत में सदा-सर्वदा प्रेम होता है। मेरे देश का युवा छोटे से छोटे को प्रेम करता है। जानकीदास बापू ने मुझे न बांधकर

अच्छा किया। मैं बांधा भी नहीं जा सकता! पर बापू, आपका प्रोग्राम हो और मेरी इच्छा हो तो आ जाऊं। मेरी इच्छा हो तो मैं सुदूर गांव में चला जाउं। हर शाम किसी झोंपड़े से भिक्षा मांग लूं। वहां बैठे। यह मेरा मनोरथ है। मेरे साथ खास कोई न आये। पुलिस भी नहीं! लोग पुलिस से डरते हैं! मुझे रहने के लिए देशी मकान दिया है इसकी प्रसन्नता है। ऐसे घर में मेरा जन्म हुआ था। मुझे बहुत आनंद मिलेगा। युवा भाईयों-बहनों, विश्व में ऐसे दिन मनाए जाते हैं। पर राम की मर्यादा मत चुकना। माँ जानकी लज्जित हो इस तरह किसी भी बेटी को ऐसे दिन नहीं मनाना चाहिए। कोई दबाव नहीं पर मैं बिनती तो कर सकता हूं।

युवा भाई-बहन, काफी पुरुषार्थ कर टूट जाते हैं! पुरुषार्थ पायदान है पर प्रारब्ध लिफ्ट है। ये साधु अपने नसीब लेकर आए हैं। भजन कर सीधा पहुंच जाय ऐसा हो सकता है। माधुकरी क्यों? भिक्षा क्यों? क्यों द्वार-द्वार जाने की बात आई? इसीलिए क्योंकि आखिरी आदमी की पीड़ा समझ में आए। मेरे देश का आखिरी आदमी यह न मान ले कि मैं उस तक कैसे पहुंचूं। यह यदि नहीं आ सकते हैं तो हमें भी जाना चाहिए। संतों के आशीर्वाद से ये सब मुझे बहुत पसंद है इसलिए जाता हूं। मेरा गंगाजल का व्रत है। पर किसी झोंपडे में जाऊं। मैं गाय का दूध ही उपयोग में लेता हूं। यह कहे बापू, चाय तो बना दूं पर दूध भेंस का है। मैं ना कहूं तो व्रत तो ना टूटे पर उसका दिल टूट जाय! अतः उसमें गंगाजल की दो बूंद डाल दूं। यदि गंगाजल पापी को मुक्ति देता हो तो भेंस के दूध को गाय का दूध न बना सके? शंकराचार्य को कोई याद करे तो मुझे कुछ होता है। रामानंद, रामानुजाचार्य, निम्बार्क, माधवाचार्य, श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य इन महानुभावों ने आखिरी आदमी तक जाने का काम किया। धर्म आखिरी आदमी तक पहुंचे तो स्वयं धर्म आशीर्वाद देता होगा। यह अर्थसमाज का दूसरा पुरुषार्थ; आखिरी आदमी तक जाना है।

दो दिन पूर्व मैं बम्बई के स्टोक मार्केट के एक उद्घाटन में गया। यह शेर बाज़ार का मुख्य स्थान है। मैंने तो जिंदगी में पहले कभी देखा नहीं था। उसी दिन कडाके के साथ सब नीचे था! मैं क्या जानूं क्या ऊपर चढ़ा क्या नीचे गिरा! मेरा नाथ जाने कब चालू हो, कब बंद हो! मुझे क्या पता? वहीं एक झालर है। उस पर डंका लगाने का। राजकोट के वजुभाई भी आए थे। एक डंका उन्होंने, एक मैंने बजाया! ध्वनि हुई। मैंने कहा, वजुभाई, आरती का समय हुआ। झालर बजाता हूं ऐसा लग रहा है। मुझे दूसरे पुरुषार्थ के बारे में विचार आता था। धर्म की छाया में यह अर्थ आखिरी छाया तक पहुंचता है। धर्म आखिरी आदमी तक पहुंचता है। काम भी पहुंचना चाहिए। काम माने जिस अर्थ में काम की जो चर्चा होती है वह यहां नहीं है। काम माने कार्य। आखिरी आदमी तक काम पहुंचना चाहिए। रोजी मिलनी चाहिए। मोक्ष का अधिकार कुछेक को मिले, कुछेक को नहीं? भाईयों को यह अधिकार मिले, बहनों को नहीं? साहब, ऐसा बहुत चला है! प्रत्येक व्यक्ति को मोक्ष-मुक्ति का अधिकार होना चाहिए। मैं नहीं जानता मोक्ष क्या है पर आपके घर में या कहीं भी किसी भी व्यक्ति के मृत्यु के समय चेहरे पर मुस्कुराहट हो तो समझिए कि यही मुक्ति है।

इन सभी तत्त्वों को आखिरी आदमी तक जाना पड़ेगा। मेरे संत यह कर रहे हैं। मुझे इससे बल मिलता है। सत् और सत्ता, पद और पादुका दोनों को आखिरी आदमी तक जाना चाहिए। भाणसाहब की रचना 'समजीने सूई रहे तो करवुं नथी कंई', ऐसा अद्भुत, सहज वाक्य कौन कहे? इसमें पूरा झेन आ जाता है। सभी सूफी आ जाय। इसमें सहज और परंपरा के सभी का समावेश होता है। जो महापुरुष ऐसा कहे कि बस, 'तू समजीने सूतो रहे, बीजुं कंई करवानुं नथी' तब मुझे जगद्गुरु शंकराचार्य याद आते हैं कि 'निद्रा समाधि स्थिति', तू निद्रा ले यही तेरी समाधि है। निद्रा तो आखिरी आदमी की समाधि है।

परमात्मा ने जिस-जिस को दिया है उसे आखिरी आदमी तक जाना चाहिए। आपकी सारी संपत्ति लेकर मत जाईए। मैं मूर्ख नहीं कि आपको कंगाल कर दूं! आपकी आय का दसवां हिस्सा आखिरी आदमी तक पहुंचाइए। कुछ न करना पड़े और पहुंच जाय यह आखिरी आदमी को संदेश है। मैं और आप आखिरी आदमी तक पहुंचने का केन्द्रीय विचार रखे। रघुवंश की कितनी मुख्य विचारधारा थी यह आपके सामने रखूंगा। रघुवंश कितना प्रेक्टिकल वंश है! कितने सर्वग्राही विचार लेकर चलता यह रघुवंश है! इसीलिए राम ने उस वंश में जन्म लिया है।

तो रामकथा का केन्द्रीय विचार 'मानस-रघुबंस' है। नौ दिनों तक भगवान के प्रसंगों के साथ इस विचार को बुनते जायेंगे। इसमें से हम कुछ विशेष पा सके। मेरी दृष्टि में 'रामचरित मानस' स्वयं संपूर्ण है। सांप्रत समय में तो यह एक है। और आगे आवश्यक्ता होगी तो कोई न कोई वाङ्मय आकर हमें जागृत करेगा। गांधीबापू भी कहते हैं, 'रामचरित मानस' ने विश्व पर बड़ा उपकार किया है। ऐसा ग्रंथ लेकर हम बैठे हैं। यहां भी रामकथा की बहुत महिमा हुई है।

यह तुलसी 'रामायण' के सात भाग है। सात सोपान है। तुलसी प्रथम सोपान कहे; वाल्मीकि 'बालकांड' कहे। तुलसी द्वितीय सोपान कहे; वाल्मीकि 'अयोध्याकांड' कहे; यों 'बाल', 'अयोध्या', 'अरण्य', 'किष्किन्धा', 'सुन्दर', 'लंका' और 'उत्तरकांड' कहते हैं। सात विभागो में सत्य, प्रेम और करुणा की कथा आबद्ध है। जिसमें राम-सीता-भरत-शिव-हनुमंत चरित्र है। यह पांच चरित्रों का पंचामृत है। 'बालकांड' के आरंभ में तुलसीदासजी सात मंत्रों में मंगलाचरण करते हैं।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

पहले मंत्र में वाणी और विनायक की वंदना की। दूसरे मंत्र में शिव-पार्वती। फिर गुरुवंदना, सीताजी-रामजी की वंदना, वाल्मीकिजी और हनुमानजी की वंदना करते हैं। अंत में तुलसी कहते हैं, यह स्वान्तः सुखाय है। मेरे अंतःकरण के सुख के लिए रघुनाथ गाथा गायन कर रहा हूं। फिर संस्कृत भाषा को दंडवत्कर, अवर्णनीय मानकर, उसकी महिमा का वर्णन न कर सके, ऐसा कहते उस पर श्रद्धा रखकर, आशीर्वाद लेकर तुलसीदासजी इस शास्त्र को लोकभाषा में उतारते हैं। अपने संत हमें अपनी ग्रामीणभाषा तक ले आए। तुलसीजी ने महान कार्य किया; लोकवाणी में किया है। बुद्ध भगवान ने भी यही कार्य किया। कबीर साहब ने तो अद्भुत कार्य किया। 'समजी ने सूतो रे' यह तो भाणसाहब ही कह सकते हैं! माँ के दूध की तरह सुपाच्य ऐसी बोली में, वाणी में तुलसी शास्त्र उतारते हैं। जगद्गुरु शंकराचार्य जो स्तोत्र में कह गए या हम वेद को माननेवाले सनातन धर्मावलंबियों को पंचदेव की पूजा करनी चाहिए। यही बात तुलसी ने अपने सद्ग्रंथ के आरंभ में पांच सोरठे में लिखी है।

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

जो जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा वही तुलसी ने कहा। प्रतिष्ठितजन एक ही बात कहते हैं। तुलसी ने पंचदेव की वंदना की। हमें गणपति की पूजा करनी चाहिए। फिर भवानी जगदंबा, दुर्गा, कालि; भगवान शंकर, उनका अभिषेक करनेवाले हम; फिर भगवान विष्णु और भगवान सूर्य; पर हम तो ग्रामीण जन है। हम मजदूरी करनेवाले; हमारे पास गणपतिपूजन का समय कहां? गणेशचतुर्थी को सिंदुर लगाते हैं। पूरे देश में गणेशचतुर्थी मनाई जाती है। गणेश विवेक का देव है। जीवन में विवेक का जतन करना गणेशपूजा है। बिना सत्संग विवेक नहीं आता। विवेक सदैव रहना चाहिए। हमारे राजनेता अति व्यस्त रहते हैं। वो जाते हैं तब उनका प्रोटोकल होता है। आगे-पीछे दो-तीन गाडियां रहती है। सब नियमानुसार होता है। उन्हें पता लगे कि पास से कोई साधु जाता है तो पूरा काफला ठहर जाता है। यह उनका विवेक है। यह

इनकी गणेशपूजा है। ऐसा पूरी दुनिया में नहीं है। हम से कोई विशिष्ट, वरिष्ठ, वशिष्ठ किसी भी क्षेत्र में हो उन्हें आदर देना चाहिए। यही गणेशपूजा है। सूर्यपूजा तो गांवों में सीखाने की जरूरत नहीं है। हम सूर्य के नीचे काम करते हैं यही सूर्यपूजा है। सूत्ररूप में कहूं तो प्रकाश में रहने का शिवसंकल्प ही सूर्यपूजा है। नौरात्रि उत्सव में भवानी की पूजा, अंबाजी-बहुचराजी की बैठक। अपना देश जगदंबा की शक्ति को आत्मसात् करनेवाला देश है। शक्ति न हो तो शक्तिमान भी नहीं होता। पर हम हंमेशा नौरात्रि नहीं मना सकते। पर तुलसी ने कहा, भवानी माने श्रद्धा।

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।

चाहे कुछ भी हो पर हमारी श्रद्धा अडिग होनी चाहिए। गुणातीत श्रद्धा। उसे हम टिकाए रखेंगे। भाणसाहब कहते हैं, तू इतना कर ले फिर कुछ मत करना। इस वचन पर श्रद्धा रहे तो हमारे लिए रोज नौरात्रि है, गौरीपूजा है, विष्णुपूजा है। संस्कृत में हमारे विद्वानों-आचार्यों ने सूक्तपाठ किया है। यदि हम ऐसा न कर सके तो अपने विचार, भावनाओं को संकीर्ण न रखे। यही विष्णुपूजा है। विष्णुपूजा माने व्यापकता। क्या हम रोज अभिषेक कर सकते हैं? रोज करे उन्हें प्रणाम। शिव का अर्थ कल्याण है। मेरा चाहे कुछ भी हो पर दूसरों का शुभ हो। हमारा यह दैनिक शिवाभिषेक है। हमारे मन में विवेक, श्रद्धा, विशाल दृष्टि, प्रकाश में जीने का संकल्प और अन्य का शुभ हो। ऐसी भावना हो ये हम निरंतर पंचदेवों को साथ में लेकर जगद्गुरु की आज्ञा का पालन करते हैं। तुलसी के वचन को आदर देते हैं।

तुलसी को लगा, मेरा समाज शायद इन पांच सूत्रों को न जान सके तो ये पांच एक में आ जाय ऐसा हो सकता है? तुलसी ने हमें राहत दी। हमें गुरु, बुद्धपुरुष, जागृत सद्गुरु मिल जाय तो समझ लीजिए गुरु में गणेश है। क्योंकि गुरु में विवेक तो है न? गुरु में श्रद्धा के दर्शन होते हैं। गुरु में व्यापकता होती है। गुरु में प्रकाश है। गुरु सूर्य है, उनके वचन सूर्य है। गुरु शिवरूप है; त्रिभुवन गुरु है। ऐसे सद्गुरु की शरण में जाना चाहिए। सबको प्रणाम कीजिए, आदर दीजिए। परंतु दृढाश्रय को व्यभिचारी मत कीजिए। हम कहीं बिक न जाय? क्योंकि हममें कुछेक प्रलोभन काम करते हैं। आश्रय एक बार ही होता है और एक का ही होता है। आधार अन्य का ले सकते हैं, परंतु 'भरोसो दृढ इन चरनन केरो।'

तुलसी ने रामकथा के पहले पद में गुरुवंदना की। शायद बिना गुरु के कोई पहुंचे इसमें मुझे आपत्ति नहीं है, परंतु मोरारिबापू को तो गुरु अवश्य ही चाहिए, चाहिए। बिना गुरु के मोरारिबापू मर जाय! बिना गुरु हम किस काम के? गुरु तो हमारा कवच है। जो हमारे संकल्प पूरे करता है। जो हमें राम दिखाता है। हमारी पीठ थपथपाकर खुश करता है। हमारा हाथ पकड़ता है। चारों ओर से परमतत्त्व हमें घेर कर बैठा है। हमें इनकी ज़रूरत है। गुरुकृपा से पा जाते हैं। गुरुपद चाहिए। सच्चा गुरु किसी को बांधता नहीं।

निझामुद्दीन ओलिया ने परमशिष्य अमीर खुशरो से कहा, कल मेरा देह नहीं होगा। ये पंचभूत का शरीर है। कल नहीं रहूंगा तो तू दुःखी हो जायगा। अकेला रहकर बंदगी कर। गुरु जैसा कोई उदार नहीं है। वे कह

> भाणसाहब की यह भूमि भजन की भूमि है। इसीलिए मुझे ज्यादा खींचाव है। क्योंकि मैंने तो भोगभूमि में कथा की है। अमरिका-ब्रिटन ये सब भोगभूमि है। योगभूमि में भी कथा की है। परमपूज्य रामदेवजीबाबा, उनकी पतंजलिपीठ, ये योगभूमि में भी कथा की है। चौबीस घंटे शोक है ऐसी भूमि में भी कथा की है। यह भाणसाहब की भजन की भूमि है इसकी प्रसन्नता है। मोरारिबापू कोई कथा निश्चित नहीं करते पर अस्तित्व की कोई चेतना कथा निश्चित करती है।

सकते हैं, बेटा, ईश्वर के मार्ग में यदि मैं तेरी बाधा बनता हूं तो मुझे भी हटाकर आगे बढ़ जा। मैं तेरी साधना सफल करने आया हूं। यही सच्चा गुरुपद है। 'सच्चा' शब्द लगाने की जरूरत नहीं है। परंतु क्या करे, झूठे लोग भी बीच में आ गये इसलिए लगाना पड़ता हैं!

'महाभारत' में प्रसंग है। कौरव-पांडव की परीक्षा है। यह पेड दिखाई देता है? सब कहे, पेड दिखता है। अब? तो कहे, डाली। अब? तो कहे, चिड़िया। मूल 'महाभारत' में गिद्ध है। फिर कहे, उसकी दो आंखें दिखाई देती है। द्रोणाचार्य कहते हैं, अब तीर मार। क्या आपको लगता है, मेरे देश का द्रोण अपने आश्रितों की परीक्षा लेने हेतु, प्रमाणपत्र देने के लिए एक जीव हिंसा करे? न करे द्रोण। जब अर्जुन ने लक्ष्यवेध किया, पक्षी गिरा तब द्रोण ने कहा, यह नकली पक्षी है, यंत्रपक्षी है। मेरे देश का गुरु कभी भी हत्या की सीख दे ही नहीं सकता। फिर भी आप कहेंगे 'महाभारत' में अठारह अक्षौहिणी सेना खत्म हो गई। यह महान ओपरेशन ज़रूरी होगा। बाकी सद्गुरु के यज्ञ में हिंसा नहीं होती। साहब, वहां यंत्रपक्षी है। व्यास विचार तो देखिए! हम कितने छोटे पड़ जाते हैं! स्वाध्याय के प्रणेता पूज्यपाद पांडुरंग दादा ने 'व्यासविचार' ग्रंथ लिखा। अर्जुन को द्रोणाचार्य ने पूछा, तुझे सब दिखता बंद हो गया है? तो कहे, हां। मैं दिखता हूं? तो कहे 'ना, आप भी नहीं दिखते।' तो कहे, बेटा, तू जीत गया! गुरु कितना उदार है! जो विचार बुद्ध ने दिया, जगद्गुरु शंकराचार्य ने दिया, 'गुरुर्नैव शिष्यः।' मेरी व्यासपीठ भी कहती रही है कि छबि निकाल डालो। आपके एकांत में कोई छबि, फोटो विघ्नरूप हो तो निकाल दीजिए। व्यासजी ने कहा, गुरु शिष्य से कहता है, 'मैं भी तुझे न दिखूं।' गुरु को हटाया नहीं पर गुरु कहते हैं, मैं तेरी साधना सिद्ध करने आया हूं। मैं तेरी बाधा नहीं। यह केवल भारत देश ही कह सकता है। यह केवल व्यास, द्रोणाचार्य कह सकते हैं। गुरुपद के औदार्यवश निझामुद्दीन अमीर से कहते हैं, तू अकेला रह। अमीर खुशरो ने कहा, मुझे अकेले रहना है। पर तू मुझे अकेला रहने दे तब न? जहां भी जाऊं मेरा गुरु मुझे घेर बैठा है! साहब, हमारे लिए तो गुरुपद की बहुत जरूरत है।

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,
प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीए ...

ऐसा कोई सद्गुरु मिले तो गौरीपूजा हो जाय। शिवपूजा हो जाय। गणेशपूजा हो जाय। विष्णुपूजा और सूर्यपूजा भी हो जाय। तुलसी गुरुवंदना कर लिखते हैं -

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती।।

प्रथम प्रकरण गुरुवंदना। इसमें गुरुमहिमा का गायन हुआ है। गुरुकृपा से दृष्टि विशुद्ध हो जाय तब तुलसी कहते हैं, मुझे पूरी दुनिया सीतारामम्य दिखती है। फिर तुलसीजी हनुमानजी की वंदना करते हैं -

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

श्री हनुमानजी महाराज की वंदना की है। हमें किसी में गुरुभाव न जगे तो हनुमानजी को गुरु मान ले। भाईयों-बहनों दोनों मान सकते हैं। 'हनुमानचालीसा' भी बहनों-भाईयों कोई भी कर सकते हैं। हनुमानजी की वंदना करने का प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है।

जय जय जय हनुमान गोसाई।
कृपा करहुँ गुरुदेव की नाई।।

आज की कथा के समापन में एक मिनट 'विनयपत्रिका' से हनुमानजी की वंदना करें-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।
बंदौ राम-लखन-बैदेही।
जे तुलसी के परम सनेही।।

भाणसाहब का वेदांत
भजन के दह में स्नान करके निकला है

बाप! भाणतीर्थ में आयोजित ये नौ दिवसीय रामकथा के दूसरे दिन फिर से एक बार भाणसाहब की चेतन समाधि को प्रणाम करके, कथा में उपस्थित सभी पूज्य चरणों को प्रणाम करता हूं। पूज्य जानकीदास बापू के इस मंगल मनोरथ में जुड़े मुख्य यजमान से लेकर अलग-अलग सेवाओं में लगे यजमान, आप सभी को व्यासपीठ से मोरारिबापू का प्रणाम। अभी कथा के आरंभ से पहले ऐतिहासिक, तटस्थ और साक्षीभाव के साथ आदरणीय इतिहासकार नरोत्तमबापा ने भाणसाहब के पूरे जीवन को संक्षेप में सच्चाई के साथ ग्रंथस्थ करके हम सबको प्रसाद के रूप में अर्पण किया। इसके लिए मैं खूब प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। बाप! आपके विचारों को प्रणाम। मैं तो इतना ही कहूंगा कि जो विषय केन्द्रस्थान में है उसकी प्रदक्षिणा करने के लिए आगे बढ़ूं कि इतने वर्षों पहले जो देश-काल होगा, जो परिस्थिति रही होगी उस परिस्थिति में भाणसाहब का अवतार लेना ही चमत्कार है! इस बात का समर्थन करने के लिए दूसरे चमत्कारों की जरूरत नहीं है। और ये काम आज की युवा गादी कर रही है उन्हें मेरा प्रणाम। जलारामबापा ने रोटीराम देके बड़ा चमत्कार नहीं किया? संतों के तो कदम-कदम पर चमत्कार होते हैं! कितने गिनोंगे? ये एक महापुरुष, मैं जो भी बोल रहा हूं ये मेरी जवाबदारी से बोल रहा हूं। साहब! मैं इसे भाणतीर्थ कहता हूं। यहां इतने सारे संत एकत्रित हुए हैं। ये इस तीर्थ को पुनः विशेषरूप से जागृत करने के लिए उपस्थित हुए हैं।

भाणसाहब के चरित्र में ऐसा लिखा है कि जब ये जन्मे तब इनके मुंह में दो दांत थे। तुलसीदासजी के लिए भी कहा जाता है कि जन्म के समय पूरी बत्तीसी थी। मुझे बहुत रुचि नहीं है इन तरह की बातों में। मैं तुलसी का गायक हूं इसलिए लोग व्यासपीठ से पूछते हैं। मैं कहता हूं, मेरे पास ऐसी चर्चा न करो तो ठीक। बहुत से लोग कहते कि फलां महापुरुष हंसते जन्मे थे। पर उन्हें रोने दो न! डोक्टर भी कहते हैं कि बालक रोना चाहिए। मेरे राम रोए, अवतार रोए, ब्रह्म रोए।

सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होई बालक सूरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पानहिं ते न परहिं भवकूपा।।

भाणसाहब का वेदांत प्रेम में नहा-धो के निकला है; भजनकुंड में स्नान करके निकला है। मैं ऐसे ही प्रसंशा नहीं कर रहा हूं। मुझे भाणसाहब पसंद है। पसंद नहीं होते तो मेरे परमात्मा का अस्तित्व मुझे लाता नहीं। इस बात को किसी के समर्थन की जरूरत नहीं। हमारे यहां अनेक बातें होती है। एक महात्मा था। भंडारा चलाता था। उसमें घी खतम हो गया। सब कहने लगे कि बापू, घी पूरा हो गया अब क्या करें? महात्मा ने कहा, कुआं में से पानी भरके उसमें पूडी तलो। पानी लाया गया। उसमें पूडियां तली। सबने भोजन किया। फिर? कहा कि घी मंगाओ और उसको कुए में डाल दो! अब जब पूडी तल ली तो कुए का पानी बिगाड़ने की क्या जरूरत थी? उस घी को गरीबों के झोंपडों तक पहुंचा देना चाहिए था। बाप! ये पूडी नहीं तली, पानीपूडी करी थी! ये पानीपूडी नई नहीं है। ये हमारे महात्माओं की चाल है; साधुओं की खेलक्रिया है!

साहब! होता होगा। नहीं होता ऐसा भी मैं नहीं मानूं। लेकिन इक्कीसवीं सदी का युवा स्वीकार करे ऐसा सत्य प्रस्तुत करो। ये समाधि कल भी पूजेंगी। इन समाधियों के सामने बैठकर रवि-भाण के भजन भी गाना है। खीमसाहब को गाना है, भीमसाहब को गाना है। हमारी पीठ-गादी ऐसे युवाओं को देने चाहिए कि जो इन स्थानों को पूरे विश्व में प्रकाशित करे। भाणसाहब के मुख में दो दांत थे। मुझे लगता है कि कुल में से वेदांत ले के आनेवाले ये साहब थे। इनके पदों में नहा-धोकर आये वेदांत का हमने अनुभव किया। तो ये भाणसाहब मूल तो रघुकुल में आए रघुवंशी है। लोहाणा कुल में आए। सरनेम ठक्कर है। परंतु मूल तो सूर्यवंश है। सूर्यवंश में रघु महाराज ऐसे महापुरुष हुए कि सूर्यवंश की जगह रघुवंश कहलाने लगे। फिर रघुवंश में राम आए। राम आए तो दशरथ का नाम भूलकर रामराज्य की बात होने लगी। पर भाणसाहब का नाम सूर्यवाचक है तो सूरज को चमत्कार की जरूरत नहीं। सूर्य एक नहीं, बारह है। जिसके बारह लक्षण मैं अपनी जवाबदारी के साथ कहता हूं। तुलसी कहते हैं कि रवि अगणित है। सूर्य अनेक परंतु अभी नौ दिन तो इस सूर्य की छाया में है, इस भाग की छाया में है।

मैं रामकथा लेके बैठा हूं और तुलसी की रोटी खा रहा हूं फिर भी संशोधन करता हूं। अमुक वस्तु मुझे अच्छी नहीं लगती तो मेरा तुलसी मुझसे नाराज नहीं होता है। नाराज हो ये तुलसी नहीं। छूने से नाराज हो जाय ये तो छुईमुई का पौधा है। तुलसी तो ठाकुरजी की थाली में जाती है। एक बहुत अच्छा शब्द यहां प्रयोग में लिया है 'भाणपरंपरा'; और ये प्रवाही परंपरा है जिसे मैं बहुत मानता हूं। ये एक सूर्य की परंपरा चली आ रही है। 'परंपरा' शब्द मुझे अच्छा लगता है। 'संप्रदाय' शब्द अच्छा है, लेकिन थोड़ा संकीर्ण है, परंपरा विशाल है। और पूर्व के घर से निकली ये परंपरा है। मूल बात ये कि जगत में कुछ नहीं था तब ब्रह्मा ने सूर्य बनाया। और सूर्य इतना बड़ा बनाया कि सूर्य को अहम् पैदा हो गया। सूर्य भागने लगता है तभी विरंचि पितामह ब्रह्मा आदेश देते हैं कि तू आगे बढ़ा तो तुझे रामदुहाई। इस प्रकार के आदेश का प्रयोग अनेक जगह हुआ है। तुलसी ने 'रामदुहाई' शब्द का उपयोग किया है। कभी-कभी मनुष्य को भी बड़ा पद मिले तो वह भागने लगता है। उसे कोई रोकनेवाला चाहिए। ऐसा ही 'महाभारत' में हुआ। विंध्याचल बढ़ने लगा, जिससे अनेक गावों का नाश हो गया। फिर एक ऋषि निकले कुंभज। ऋषि ने 'रामदुहाई' दी। बढ़ता विंध्याचल कुंभज ने रोका। साहब! सूरज घोडावाला को एक बार विरंचि ने रोका। ये भाणतीर्थ में आया हुआ एक भाग। उसे छोटाभाई भरवाड रोकता है। साहब! छोटे को छोटा ना समझो। जो सद्गुरु को रोक सके वो छोटा नहीं होता है।

मेपो भरवाड घर नहीं, बाहर गया है। यहां भाणसाहब की घोडी। वो सहजानंद की घोडी। रामपीर का घोडा। ये घोडी इन्द्रियों का प्रतीक है। अत्यंत होर्सपावर जिसे कहते हैं, इन धमधमाती इन्द्रियों को कोई भाण ही पकड़ के रख सकता है। तुम कल्पना करो, मेपा भरवाड ने कहा होगा कि साहब, आप गये तो आप को रामदुहाई। और मुझे लगता है कि उन्होंने डोरी कैसे खींची होगी? घोडा वहीं स्थिर हो गया कि अब रामदुहाई दी है! इससे आगे नहीं जा सकता। पूरी भाणपरंपरा है। रघु तो बीच में आते हैं। आकाश का भाण, धरती का भाण, हमारा भाण, सूर्य के साथ संबंध रखता है। समाधि तैयार होती है और पहले श्वान समाधि ले लेता है। श्वान को गुरु बहुत अच्छे लगते हैं। क्योंकि वो गुरुदत्त के पास रहता है। श्वान को खाली चोर को सूंघना नहीं आता, उसे आचार्य को भी सूंघना आता है। दत्तवाला श्वान तो साधुओं को भी पहचान ले।

सुरेन्द्रनगर के पास मैं कथा कर रहा था और एक पुस्तक में मेरा चमत्कार लिखा गया। मुझे सार्वजनिक रूप से ये कहना पड़ा कि ये पुस्तक कोई ना खरीदे। व्यासपीठ से मैं हंमेशा कोशिश करता हूं कि मानव को मानव ही रहने दो। पुस्तक में लिखा था कि

जब शुरूआत में मोरारिबापू कथा करते थे तब नौकरी भी करते थे। तो बीच में छुट्टी लेके जाते थे क्योंकि बीच में उपस्थित दर्ज तो करनी पड़ती है। नहीं तो नौकरी चली जाय। इसलिए मोरारिबापू को कथा में उपस्थित होना होता था तब हनुमानजी मोरारिबापू की क्लास में जाकर पढ़ा आते थे! ऐसे फालतू के चमत्कार किस लिए खड़े करते हो? हनुमानजी नहीं गये! तीस रूपया की होर्न बिना की एम्बेसेडर करके मैं खुद गया था! हनुमान ने पी.टी.सी. थोड़ी ही करी कि पढ़ाने जायें?

उस समय केसेट-कथाएं बहुत प्रचलित थी। अब तो कथाकार भी बहुत हो गये हैं। उस समय भगवत के गायक कम थे। 'भागवत' में डोंगरेबापा और यहां मैं। और अब जहां हाथ डालो वहीं भगवतकथा के गायक मिल जायेंगे! उस समय व्यासपीठ पर लोक टेपरेकोर्डर पधराते थे, फोटो पधराते थे। और लोग तीन-तीन घंटे दो समय अवश्य आते। फिर 'मानस' की आरती उतारते। एक बार की घटना है कि मैं अलियाबाडा से निकलकर कालावड रोड पर गया। मैंने मेरी आवाज़ सुनी तो कहा, ये क्या है? तो कहा गया कि आपकी केसेट-कथा है। लोग कम से कम दो सौ-तीन सौ जितने बैठकर सुन रहे थे। मैं वहां पहुंच गया तो लोग देखकर खुश हो गये! वहां पांच मिनट रामधून बुलाके मैं निकल गया और दूसरे दिन इसे चमत्कार कहा गया कि केसेट के समय अचानक बापू हाजर हो गये! दूसरे दिन मुझे खुलासा करना पड़ा कि ये सब गलत है! और ये चमत्कार की बातें वहां बैठे महापुरुष ही करते हैं! परंतु सत्य तो सत्य ही रहता है। श्वान को भी यहां होता है कि किसके साथ रहना है? जितनी समझ उसमें होती है उतनी हममें नहीं! हम कितने दुर्भाग्यशाली है! फिर समाधि खुदाई जाती है और भाणसाहब बैठते हैं। भाणसाहब अभी भी अंदर बैठे हैं, अस्त हुए नहीं। वर्ना जो ऊगता है वो अस्त होता है।

तो सूर्य के बारह लक्षण बाप! रघुवंश का मूल विषय है, लेकिन रघु का आदि तो सूर्य है। पूरी परंपरा सूर्यवंश की है। इसलिए सूर्य के साथ भाण का संबंध मुझे दिखता है। दूसरी बार सूर्य को हनुमानजी बचपन में निगल गये थे।

बाल समय रबि भक्षि लियो तब
तिनहुं लोक भयो अंधियारो।

इस कथा को हम सब जानते हैं। हनुमानजी सूर्य को निगल गये, पर सूर्य तो उनका गुरु है लेकिन धन्य है वो शिष्य जो गुरु को निगल जाय। भाण को भी उसके कितने ही शिष्य निगल चुके हैं! निगल जाना मतलब गले उतरना। लेकिन अमुक वस्तु हमारे गले नहीं उतरती! हम उल्टी करते हैं! धन्य है वो शिष्य जो गुरु को निगल जाय। युवा भाई-बहनों, गुरु को निगल जाना। बचपन में गुरु को निगल जाना और जवानी में गुरु के सम्मुख बैठ जाना। हनुमान जब गुरुदीक्षा लेने गये तब सूर्य ने कहा कि मेरे सामने खड़े हो जाओ। मेरी गति तो चालू ही रहेगी। तुझे पीछे चलना होगा, पर विमुख नहीं होना। बाप! जो जवानी में गुरुजद को पचा ले और गुरु की सम्मुखता कभी नहीं छोड़े, विमुख नहीं हो, वो दूसरा भाण होगा।

तीसरा लक्षण, सूर्य को राहु निगल जाता है। यहां तो शिष्य ने निगला था। पर हमारे यहां सूर्य-चंद्र को राहु निगलता है। तो भाण साहब को भी किसी राहु ने निगल लिया? हां, एक राहु ने उन्हें निगला है। 'रामचरित मानस' में राम को राहु कहा गया है, रावण को चन्द्र कहा गया है। जैसे सूरज को राहु निगले उसी तरह मैं कहता हूं, भाणसाहब को भी राम रूपी राहु ने निगल लिया। राम ने उनका ग्रहण किया। राम को लगा कि इसे थोड़ी देर मुंह में रखकर इसका स्वाद चखुं। इसकी मीठास ले लूं। इसका उजाला मेरे अंदर उतरे। 'मानस' अद्भुत शास्त्र है! खेल-खेल में ले-ले ऐसा ग्रंथ नहीं। रहस्यों से भरा है। ये तो गुरुकृपा मूल में है। ये तीसरी समानता मुझे दिखाई दी। भाणसाहब को हराम ने नहीं, राम ने निगला। हमको दूसरे राहुतत्त्व ग्रसित कर गये हैं!

कहीं पर धन का राहु, कहीं प्रतिष्ठा का राहु, कहीं प्रचार का राहु निगल जाता है! अनेक प्रकार के प्रलोभन हमें निगल जाते हैं। बड़े-बड़े त्यागीओं को निगल जाते हैं। फिर हम तो एक गृहस्थ है।

चौथा लक्षण, सूर्य तेज का समूह है। हम सबने भाणसाहब को देखा नहीं, परंतु इस समय भाणतीर्थ में जो वाइब्रेशन, स्पंदन है उनके आधार पर तो यकीनन कहा जा सकता है कि उनके चेहरे पर तेज बहुत होगा। इनके नजदीक आने पर लोगों को परेशानी होती होगी! चलो, रूप को छोड़ दे, तेजस्वी चेहरे की बात छोड़ दे, परंतु -

जासु बचन रबिकर निकर।

मेरे तुलसी कहते हैं कि गुरु वो है, जिनके वचन सूरज की किरण जैसे हो। इनके शब्दों तो सूरज की किरण है ही। ये 'समझकर सोते रहे', ये तो मुझे तुरीया मिश्रित सुषुप्ति ही लगती है। जागृत अवस्था की ये बात नहीं; स्वप्न की तो जरा भी नहीं। ये सुषुप्ति बहुत बड़ी अवस्था है। फिर भी सुषुप्ति और तुरीया दोनों सखी हो के रास खेलती हो, ऐसी अवस्था को शायद भाणसाहब ने कहा कि समझकर सो जा। 'रामचरित मानस' में एक तापस का प्रकरण है। साधना का, स्मरण का, भजन का आंतरशुद्धि का तेज ये सूर्य के साथ उनका खूब मेल है ये सिद्ध करता है। फलस्वरूप उनके वचन, पद, सीधी-सादी बोली हमारे मोहरूपी अंधकार को दूर करती है।

सूर्य का पांचवां लक्षण है, सूरज किसी दिन अस्त नहीं होता। ये पृथ्वी घूमती है इसलिए लगता है कि यहां से वहां उगा, सूर्य के चारों तरफ पृथ्वी घूमती है। सूर्य अस्त होता नहीं फिर भी होता है, क्योंकि सूर्य को पता है कि अगर मैं अस्त नहीं होऊंगा तो जगत विश्राम नहीं करेगा। साधु किस लिए समाधि लेते हैं? अपने आश्रितों को बिश्राम देने के लिए। और ये संदेशा देते हैं कि मैं आज अस्त हुआ हूं, किसी न किसी रूप में वापस आऊंगा। एक अर्थ में तो भाणसाहब को कबीर का अंशावतार कहने की बात भी भाई। ऐसे सभी संत सद्गुरु जगत को विश्रांति देते हैं।

छठ्ठा लक्षण सूरज का कि सूरज ना हो तो वरसाद ना हो। वैज्ञानिक सत्य है। सूरज की प्रखर गर्मी से समुद्र का पानी भाप बनता है। भाप के बादल बनते हैं और फिर बादल बरसते हैं तब नदियों में पानी प्रवाहमान होता है। और 'सस्यश्यामलाम्' पूरी धरती बनती है। सूर्य का एक अद्भुत कार्य है ये। समुद्र का पानी पेय नहीं। पेय करने बादल बने फिर बरसे! भाणसाहब ने भी तपस्या करके तप के नीर उपर किया, भाव के बादल बांधे।

इसलिए मैंने कहा कि भजन में नहाया हुआ वेदांत है। तो ये महापुरुष बरसे हैं। जगत में प्रेम बरसाया। ये सूर्य का काम करके गये इसलिए एक ओर समानता व्यासपीठ को दिखती है। ये महापुरुष खुद तपकर बरसे हैं।

सूर्य का सातवां लक्षण, ये हमें ऐसा नहीं कहता कि तुम मेरे घर आओ। सूर्य एक ऐसा गुरुद्वार है जो किसी को अपने द्वार नहीं बुलाता। हां, गुरुद्वार जाने की महिमा है। गुरु के घर कोई प्रसंग हो तो आमंत्रण की राह नहीं देखना। ये भाणसाहब की समाधि का शुभ प्रसंग है। यहां सब को खुल्ला आमंत्रण है। गुरु द्वारा आमंत्रण की आवश्यकता नहीं होती, ऐसा 'रामायण' में लिखा है। माता-पिता के घर संतान आमंत्रण के बिना जा सकता है; मित्र के घर आमंत्रण बिना जा सकता है और भगवद्संबंधी कार्य हो उसमें भी व्यक्ति आमंत्रण के बिना जा सकता है। सूरज एक ऐसा गुरु है जो हमें खुद के गुरुद्वार पर आने नहीं देता। क्योंकि उसके तेज में हम टिक नहीं सकते। इसलिए सूर्य की किरण हमारे घर तक आती है। गुरु कहते हैं, मेपा, मैंने वचन दिया है, मैं तेरे घर आऊंगा। भाण उसके घर गये। इनके भजन, पद या फिर जब शरीरधारी रहे होंगे तब घोडी पर बैठकर मौज करने निकलते होंगे! तो इस तरह ये सूरज भी घर-घर घूमे होंगे। सूर्य के साथ निकला ये सातवां लक्षण मुझे बराबर लगता है।

आठवां लक्षण सूर्य का कि वो स्वयं प्रकाशित है। भले ही उपनिषद कहते हो कि प्रकाश से सूर्य चमकता है! परंतु हम देख नहीं सकते कि कहां से ये ऊर्जा आयी है? फिर सूर्य का गुरु कौन ये खोजने निकलने की हमें आवश्यकता नहीं, पर इसकी एक स्वयं ऊर्जा है। जैसे द्रोणाचार्य कहते हैं कि तू मुझे देखना बंद कर फिर अपना लक्षण सिद्ध कर। गुरु स्वयं हट जाते हैं। सूर्य की स्वयंप्रभा है इसी तरह निजानंदी मानवी का खुद का आभामंडल होता है। ये उधार लिया नहीं जाता। अमुक प्रकार की क्रिम-मेकअप से चेहरा चमकीला नहीं होता है। सौराष्ट्र युनिवर्सिटी में तीन दिवसीय प्रवचन था उसमें एक विद्यार्थी ने मुझे पूछा, बापू, आप आते हो तो कौन-सा मेकअप करते हो? मैंने कहा, मैं मेकअप का व्यक्ति नहीं, मैं तो वेकअप का व्यक्ति हूं। भाणसाहब की भी निज आभामंडल होगी। तो सद्गुरु, बुद्धपुरुष लोगों की खुद की आभा होती है। उसे उधार रौशनी की जरूरत नहीं। नौवां लक्षण परोपकार।

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः
परोपकाराय वहन्ति नद्य।
परोपकाराय दुहन्ति गावः
परोपकारार्थमिदं शरीरम्।।

ये सब परोपकारी तत्त्व है। हमारा ये पृथ्वी का भाण भी सूर्य के साथ परोपकार को बांटने निकले हैं। इसलिए हमारे यहां पदों में गाया जाता है -

संत परम हितकारी, जगतमांही।
प्रभुपद प्रकट करावत प्रीति, भरम मिटावत भारी।।
त्रिगुणातीत फिरत तन त्यागी, रीत जगत से न्यारी।
ब्रह्मानंद संतन की सोबत, मिलत है प्रकट मुरारि।।

ये भाणसाहब का व्रत भी परोपकार के लिए। 'दो भूखे को रोटी, प्रभु को देना मन', ऐसा रामभगत भी गाते थे, पुनित महाराज भी कहते। और कबीरदास का तो ये आदिसूत्र रहा-

कबीर कहे कमाल को दो बातां सीख ले।
कर साहब की बंदगी भूखे को कुछ दे।

हमारे यहां संतों ने जो काम किया है उसे लिखने के लिए आकाश भी कम पड़ेगा! भाणसाहब ने रोटी में राम देखे, भाणसाहब परोपकार का एक विग्रह माना जाय कि राम का भजन करते-करते भूखे को रोटी दी। मतलब कि रोटी एक प्रतीक है। बाकी सभी प्रकार की सेवा की हो। सभी सेवा ये नौवां लक्षण।

सूर्य को तुलसीदास ने हंस कहा है। हंस अर्थात् सूरज। और हंस का लक्षण है नीर-क्षीर अलग करना। आकाश में भगवान भानु एक हंस है जो नीर-क्षीर को अलग करता है। बादल होते हैं, खारा पानी अलग हो

जाता है। ये भी कुटुंब की कर्कशता तोड़ के एक मटुकी से पानी पीना शुरू करा देते हैं। ऐसा चमत्कार दूसरा कौन-सा? मरे व्यक्ति को ज़िन्दा करना मतलब? 'रामायण' में चौदह प्रकार के व्यक्ति मरे हुए बताए हैं। ऐसे व्यक्तियों को वापस समाज में बैठा करना मतलब मरे हुए को ज़िन्दा करना।

कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा।
अति दरिद्र अजसी अतिबूढ़ा।।
सदा रोगबस संतत क्रोधी।
बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी।।
तनु पोषक निंदक अघ खानी।
जीवत सव सम चौदह प्रानी।।

तुलसीदासजी कहते हैं, जगत में चौदह प्रकार के व्यक्ति मरे हुए के समान है। पहला कौल। कौल का एक अर्थ है वाममार्गी। वाममार्ग मतलब पूरा गांव जिस मार्ग पर चलता हो उसके विपरीत जो चले। जीवित हो तो भी मरे के समान हो! ऐसे मानवों को वाममार्ग से सद्मार्ग की तरफ ले जाना, मरे को ज़िन्दा करना ही है। कामवश; अत्यंत भोगी मनुष्य मरा हुआ है। शास्त्रकार कहते हैं कि अत्यंत भोग में लिप्त हो उस पर हथियार उठाना मना है। अत्यंत भोगी को कोई भाणसाहब खुद के सद्वचनों से योगी के पंथ पर चडाए तो ये मरे को ज़िन्दा करना नहीं तो क्या है? कृपण; कृपण मतलब लोभी। खुद का घर जलता हो फिर भी फायर ब्रिगेड को मिस कोल करे! ऐसे अनेक अत्यंत लोभी है जो मृतक जीवन जीते हैं। दूसरों को देना सीखाना ये मरे को जीवन दिया कहा जाता है। पैसों की बात नहीं, वाणी में भी कृपण होता है! वृत्ति का लोभी हो और इनको भाणसाहब ने एकाद भजन सुनाये हो जिसे सुनकर हृदय उदार हो गया हो ये मरे को ज़िन्दा करना नहीं तो क्या है? लड़खड़ाते हुए को गति देनी यह मरे को ज़िन्दा करने जैसा है।

चौथा विमूढ; विमूढ मतलब विशेष मूढ; अत्यंत मूर्ख; कुछ समझे नहीं! उसके साथ मारपीट नहीं की जाती। दुनिया हमसे कहे कि वो तो मूर्ख था, आपने भी ऐसा किया! ऐसे महामूरख को पंडित बना दिया जाय ये मरे को ज़िन्दा करना ही है। पांचवां मरा हुआ अत्यंत दरिद्र; जिसके पास रोटी, कपड़ा, मकान नहीं। अत्यंत गरीब है। ऐसे को मारा जाय? वो तो बेचारा नसीब से ही गरीब है, मरा हुआ है। उसे झोंपडी बना दे, दो जोड़ी कपड़े दिलाओ, समयसर उसके घर अनाज भेजो, तो मरे को जीवित करना ही है। छठ्ठा सूत्र अजशी; दुनिया में जिसे बदनामी मिली हो उसे मारे नहीं; बदनामी से ही उसकी मृत्यु हो गई है। वो मरे के ही समान है।

गुजारे जे शिरे तारे जगतनो नाथ ते स्हेजे.
गण्युं जे प्यारुं प्याराए अति प्यारुं गणी लेजे.

तो बाप! अति बुड्ढा, अत्यंत वृद्ध हो गया हो उसे मारे नहीं, उसका पालन करो। रोग से ग्रस्त हो उसे आरोग्य प्रदान करो, हिंमत दो, बैठा करो। अत्यंत क्रोधी जो हंमेशा खिजता हो, मरे के समान है। उससे करुणा करो। विष्णुविमुख मतलब भगवान विष्णु के विरोधी, जो व्यापक विचारों के विरोधी हो वो मरा हुआ है। वेद और साधुओं का विरोध करे वो मरा हुआ है। मेरे कागबापू ने लिखा है कि नूर ले लिया अर्थात् किराया ले लिया हो और बीच समुद्र में नाव को डूबो दे ऐसे लोगों के यहां नहीं जाना चाहिए। महत्त्व की लाईन ये कि संतों में छिद्र खोदे। श्रुति अर्थात् वेद; वेद अर्थात् ज्ञान, समझ, सही दृष्टि। और संत दुनिया के लिए जीते हैं और दुनिया के लिए अलोप हो जाते हैं। ऐसे महापुरुषो में हम छेद देखते हैं तो हम मरे के समान है! निंदक; जो दूसरों की हंमेशा निंदा करे, इर्षा, बैर करे वो मरा हुआ है। अघखानी; पाप की खाण है। इस तरह चौदह जने मरे के समान है। ऐसे लोगों के जीवन में सद्किरण फैलाना, जीवन उजागर करना संतों का काम है। ऐसा काम भाणसाहब ने किया। अपने भजन की महिमा से मरे को ज़िन्दा किया। और सूर्य का बारहवां लक्षण है अंधेरे को निगलना। तो सूर्य की तरह सद्गुरु हमारे सब के मन में प्रकट मोह के, ममता के अंधेरे को हटाते हैं। भाणसाहब जैसे सद्गुरु आज सूर्य का काम हमारे सामने करते हैं। सूर्य को भानु कहा जाता है। अपनी लोकभाषा में हम उसे भाण कहते हैं। ऐसा ही एक भाण इस भूमि को तीर्थ बना गया।

हनुमानजी की वंदना के बाद तुलसीदासजी पूरे 'रामायण' का इतिहास रखते हैं। फिर रामनाम की वंदना करते हैं। तुलसी कहते हैं कि भाव से अभाव से किसी भी तरह आप राम का नाम लो। रामनाम मतलब आप जिसे मानते हो, कृष्ण नाम, माताजी का नाम, शिव नाम, बुद्ध भगवान का नाम, कोई भी। आपकी आस्था अनुसार परंतु भय और प्रलोभन के बिना। जिस काल में हम सब है उसके लिए तुलसी कहते हैं, ध्यान न करो, यज्ञ न करो, कोई चिंता नहीं। कलियुग में केवल प्रभु का नाम लो, बस काफी है। फिर वो नाम राम हो या कृष्ण हो। पाश्चात्य जगत कहता है कि नाम में क्या रखा है? परंतु रामनाम में सबकुछ है। सभी नदियां रामरूपी सागर में आकर मिलती है। और कुछ नहीं तो खुद का ही नाम लो। हो सकता है। इस देश का ऋषि कहता है, 'सोऽहम् सोऽहम्।' मैं ब्रह्म हूं। 'अहं ब्रह्मास्मि।' कोई भी नाम लो। भयमुक्त और प्रलोभनमुक्त कोई भी नाम लो ये हरिनाम है। कहीं किसी पाट पर कोई साधु बैठा हो, ज्योति जल रही हो, कुछ समझ में नहीं आता हो तो भी जगह मिले वहां बैठकर ज्योत के दर्शन करना। साहब को याद करोगे तो कोई विमान नहीं आयेगा पर उनके दरबार में विशेष मान मिलेगा। विश्व देता है वो विशेष सम्मान नहीं होता, बल्कि विश्वंभर देता है वो विशेष सम्मान होता है। ऐसे रामनाम की महिमा तुलसी ने गाई है। और फिर सरोवर की उपमा दी है। जैसे सरोवर के चार घाट हो उनमें से एक ज्ञानघाट, जहां शिवजी पार्वती को कथा सुनाते हैं। दूसरा कर्मघाट, जहां याज्ञवल्क्य महाराज भारद्वाज को कथा सुनाते हैं। तीसरा उपासनाघाट, जहां कागभुशुंडिजी गरुड को कथा सुनाते हैं। हमारे जैसों के लिए तुलसी ने एक घाट खड़ा किया हैं, दीनता का घाट, शरणागति घाट, गरीबी का घाट। रांकपणुं अर्थात् अंत:करण की ऋजुता। हमारी गंगासती भी कहती है -

भक्ति करवी एने रांक थईने रे'वुं ने,
मेलवुं अंतरनुं अभिमान रे.

तो बाप! हमारे जैसों के लिए ये दीनता का घाट है, जहां से तुलसी हमें कर्मघाट पर ले जाते हैं। दीनता का अर्थ प्रमाद नहीं करना। दीनता के घाट से कर्म के घाट पर पुरुषार्थ करना है। गंगा-यमुना-सरस्वती का जहां संगम हुआ है, तीर्थराज प्रयाग में हर वर्ष कुंभ भरता है। एक बार कुंभ के बाद याज्ञवल्क्य ने बिदा ली तो भरद्वाज ने चरण पकड़े और एक जिज्ञासा की, महाराज, रामनाम का खूब व्यापक प्रभाव है। संतों रामनाम गाते हैं। भगवान शंकर ज्ञान-गुण की खदान है। खुद अविनाशी है फिर भी रामनाम जपते हैं। ये समझाओ कि रामनाम तत्त्व क्या है? प्रश्न सुनके याज्ञवल्क्य मुस्कुराए और कथा का आरंभ किया। रामतत्त्व सर्वव्यापक है। ये गर्भ में भी आ सकता है। हृदय में निरंतर निवास कर सकता है। प्रगट भी हो सकता है। आखिर रामतत्त्व रामतत्त्व है। और याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी को भगवान शंकर की कथा सुनाते हैं।

'रामचरित मानस' में राम को राहु कहा गया है, रावण को चन्द्र कहा गया है। जैसे सूरज को राहु निगले उसी तरह मैं कहता हूं, भाणसाहब को भी राम रूपी राहु ने निगल लिया। राम ने उनका ग्रहण किया। राम को लगा कि इसे थोड़ी देर मुंह में रखकर इसका स्वाद चखूं। इसकी मीठास ले लूं। इसका उजाला मेरे अंदर उतरे। भाणसाहब को हराम ने नहीं, राम ने निगला। हमको दूसरे राहुतत्त्व ग्रसित कर गये हैं! कहीं पर धन का राहु, कहीं प्रतिष्ठा का राहु, कहीं प्रचार का राहु निगल जाता है! अनेक प्रकार के प्रलोभन हमें निगल जाते हैं। बड़े-बड़े त्यागीओं को निगल जाते हैं।

रघुवंश में सादगीपूर्ण और गौरवपूर्ण जीवन की स्थापना है

रामकथा अंतर्गत जिसकी विशेषरूप से सात्त्विक-तात्त्विक दृष्टि से एक संवाद के रूप में हम बात कर रहे हैं वह 'मानस-रघुबंस' है। आप जानते हैं, 'मानस' के अनेक वन में से एक वन अशोकवन है। दूसरा कामदवन है, जहां भगवान राम चौदह वर्ष की अवधि में लम्बे समय तक रुके। तीसरा दंडकवन है। यहां प्रभु ने अवतार कार्य में जो ललित नरलीला करनी थी इसका आरंभ किया है। एक वन नैमिष है। ये साधकों की, साधु-संतों की, कथा-जगत की बहुत बड़ी भूमि है। 'किष्किन्धा' के राजवन का नाम मधुवन है। तुलसीदासजी परशुरामजी के मुख से कहलाते हैं कि रघुवंश कमलवन है।

यहां कल रघुवंशी संमेलन था। लोहाणा महापरिषद का आंतर राष्ट्रीय संमेलन था। लोहाणा समाज का रघुवंशी समाज बहुत गौरवान्वित था। गौरव होना चाहिए लेकिन रघुवंश की महिमा आगे न ले जा सके पर जो है उसे टिकाए रखे, यह जिम्मेदारी है। रघुवंशी गुण जिस कुल में होते हैं ऐसे कुल में जन्म लिया है, इसका गौरव ले सकते हैं। पर इसके साथ जिम्मेदारी बढ़ती है। परशुरामजी 'बालब्रह्मचारी' कहलाने में बहुत गौरव का अनुभव लेते हैं। विनोबाजी ने भी कहा कि आदमी के सद्गुणों का गुणदर्शन होना चाहिए। वे कहते हैं, अपने गुणों का ढिंढोरा नहीं पीटना चाहिए। पर अपना स्वभाव अच्छा हो तो मन ही मन खुश होना चाहिए कि मेरा स्वभाव साधु का है। ऐसा एलान न करे। ऐसी पत्रिका प्रगट न करे। मेरे तुलसी एक पद लिखते हैं-

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।।

मेरा हरि मुझ पर कृपा करे और मुझे साधु स्वभाव दे। मैं साधु स्वभाव ग्रहण करूं। मैं साधु स्वभाव में जीऊं।

परिहरि देह-जनित चिंता, दु:ख-सुख समबुद्धि सहौंगो।

तुलसी ये मानते हैं कि मन से चिंता का जन्म नहीं होता। बड़ा क्रांतिकारी वाक्य है। वे कहते हैं, देहजनित चिंताओं को दूर कर दूं। चिंता देहजनित है या मनजनित हैं? चिंता तो मन का विषय हैं, ऐसा हम मानते हैं। पर तुलसी देहजनति इसीलिए मानते हैं कि मन को किसी बुद्धपुरुष से बदला जा सकता है, देह नहीं। सद्गुरुओं की समाधि के पास बैठकर मन बदले हैं। मन बदल सकते हैं। कब? सद्गुरु के पास। क्यों बदले? हमारा मन जैसा भी है, सद्गुरु स्वीकारते हैं। वे नहीं कहते कि कुटिलता छोड़, पहले सरल बन। वे हमें कुटिल रूप में भी स्वीकारते हैं। उसमें जितना सत्त्व है उसे दीक्षित करते हैं। वे सिंह आये तो सिंह का या बंदर आये तो बंदर का मन स्वीकारते हैं। बंदर को शेर बनाया नहीं जा सकता। यह धर्मान्तर है। बंदर ही एक से दूसरी डाली पर उछलकूद करने में प्रथम आता है, शेर नहीं आ सकता। पर गर्जना करने में प्रथम नंबर शेर का ही होता है, बंदर का नहीं। डॉक्टर को डॉक्टर रहने दे। दीक्षा न दे। हां, किसी संप्रदाय में दीक्षित होने के बाद भी डॉक्टरी कर सकता है। ज्यों बापूजी भी करते थे, अध्वर्युसाहब करते थे। उन्होंने

'दिव्य जीवनसंघ' में संन्यास लिया फिर भी वीरनगर में आंख के ओपरेशन करते रहे।

एक युवान पूछता हैं, 'मैंने नौ कथाएं सुनी हैं। अब मैं आगे पढ़ूं या भजन करूं?' 'भजन करते-करते पढ़। भजन कोई विशेष साधन नहीं है। भजन तो मानवी का स्वभाव हैं। जीने के लिए श्वासोश्वास की क्रिया सहजरूप से होती है। भाई, पहले तू पढ़। नौकरी करना। परमात्मा ने सबका कार्य निश्चित किया है। उसका विकास करे। उसे किसी गुरुकृपा से, अनुग्रह से, गुरु की समीप रहकर वात्सल्यपूर्ण बुद्धपुरुष हम पर वात्सल्य बरसाया ही करे तो समझिए कि यह 'मातृ देवो भव' है। स्वयं परिपूर्ण है। जो किसीका शोषण नहीं करता, ऐसा गुरु 'पितृ देवो भव' है। और जो आचरण सिखाए, ऐसा गुरु 'आचार्य देवो भव' है।'जेनी जोता वाट ए शेरीमां सामा मळ्या', ऐसा गुरु 'अतिथि देवो भव' है। पता नहीं था रवि और भाण कब मिल जाय? खीमसाहब-भीमसाहब कब मिल जाए? दासीजीवण कब मिल जाए? ये खोजे नहीं जाते। वे मिल ही जाते हैं।

कबीरसाहब कहते हैं, आपका गुरु, परमात्मा तकिये के पास बैठा है पर आपको पता नहीं हैं। आप करवट नहीं लेते। 'भाण कहे भटकीश मा, मथीजोने मनमांही।' गुरु को हम पैरों के पास नहीं बिठाते, हमें उनके पैरों के पास बैठना चाहिए। गुरु को कहीं पर तो बैठना है। इसीलिए वे तकिये के पास बैठते हैं। और गुरुआश्रितों को ऐसे अनुभव होते हैं। गुरु निजामुद्दीन का प्रधान आश्रित अमीर खुशरो बहुत थका है। बिना गुरु को कहे सो जाता है। बच्चा स्कूल से आकर थकान के कारण सो जाए तो माँ खुश होती है। पर माँ को चिंता होती है कि बिना खाए-पीए सो गया है? गुरु भी संसार से थके-पके शिष्य को अपने तकिये के पास सोया देखकर प्रसन्न होता है। चिंता यह है कि यह बिना बंदगी के सो गया होगा? साधु का भोजन भजन है। हमारे निम्बार्कीयों में तो आचार्य जब क्षेमकुशल पूछे, तुम्हारा आहार क्या है? तब यों कहे, 'हरिनाम आहार।' गंगासती ने कहा, 'जेने सदाये भजननो आहार।'

शीलवंत साधुने वारेवारे नमीए पानबाई!
जेना बदले नहि व्रतमान रे;
चित्तनी वरती जेनी सदाय निरमळी,
जेने मा'राज थया मे'रबान रे...
नाम ने रूप जेणे मिथ्या करी जाण्युं ने
सदाय भजननो आहार रे...

हम संसार में है इसलिए भविष्य की योजनाएं होती है। पर अध्यात्म में जिस लक्ष्य की हम बात करते हैं कि यह लक्ष्य चाहिए, यह वर्तमान का बड़ा अपमान है। क्या लक्ष्य? हम इजनेरी का पढ़े, विदेश जाए यह सब व्यावहारिक है। अध्यात्म का लक्ष्य क्या? गुरु मिले, बात खतम! जिसे गुरु के बाद ईश्वर के दर्शन करने हो वो अध्यात्म से रिझाइन करे। इससे बड़ा अपमान गुरु का क्या है कि सच्चा गुरु मिलने पर भी जिससे हरि की इच्छा रहे! जिसे सदा भजन का आहार है। आहार में ठीक न लिया हो तो अपच हो जाय और ठीक लिया हो तो तृप्ति होती है। भजन के आहार में न तो अपच है न सुपच। मैं आप की बात नहीं जानता। आप अपना जाने। मैं अपनी कहूं तो हमें तृप्ति होती ही नहीं! न अपच, न डकार। मैं अपने पर विचार करूं तो लगता है, जो वर्तमान न बदले; जिसे कोई लक्ष्य न हो। गुरु मिल जाय तो फ़िर परमात्मा भी लक्ष्य नहीं होना चाहिए। कौन परमात्मा? ऐसा गुरुपन भी गुरु में होता ही है। पर प्रागट्य निष्ठावान शिष्य ही कर सकता है। 'नरहरि प्रगट किए प्रह्लादा।' यह तो अवतार की पूरी बात है। पर नरहरि को कोई प्रह्लाद ही प्रगट करता है। गुरु के दिए काम से आश्रित कभी श्रमित होकर पीर के तकिये पर आराम कर लेता है। गुरुजी खुश होते हैं। चिंता केवल यही होती है कि बिना बंदगी किए

तो सोया नहीं होगा न? अमीर खुशरो सो जाते हैं थकान के कारण। गुरु को बताया नहीं है। चार-पांच घण्टे की नींद के बाद जगता है। अरे, मैंने तो गुरु से कहा भी नहीं कि आ गया हूं और सो गया! सावध होकर देखा कि निज़ामुद्दीन तकिये के पास बैठे हैं! बाबा कहते हैं, 'तू मेरी गोद में सो गया था। तुझे पता ही नहीं था। मैं तेरा तकिया हूं।

जय रघुबंस बनज बन भानू।।

हम में राम है, राम का रक्त है तो हराम नहीं आते। रघुवंशी होने का गौरव अवश्य ले पर मैं तो टोकूंगा क्योंकि रघुवंश का गुणगान गाते-गाते हमने गला फ़ाड़ दिया है! मेरी गिनती अनुसार 'रामचरित मानस' में 'रघुबंस' शब्द सत्ताईस बार आया। 'रघुवंस' एक बार; यों अठ्ठाईस बार आया।

रघुवंश कमलवन है। रघुवंशीओं के वर्णन अपने यहां ईक्ष्वाकुकुल में आया। जिस कुल में हमारा ईश्वर, हमारा परमात्मा, पूरे विश्व का परम तत्त्व अवतीर्ण हुआ। भगवान राम जिस कुल में आए। ऐसे रघुवंश के लक्षण हमें सोचने हैं। जीवन के सात प्रकार है। ये सभी एक ही व्यक्ति में नहीं होता। परन्तु रघुवंशी में था। बुद्ध पुरुष में तो सातों प्रकार के जीवन का समन्वय होता है। वंश का आना-जाना जारी रहता है। परन्तु साधुता शाश्वत है। तो कौन-से सात जीवन जिस पर रघुवंश गौरव ले सके? जिसे लेकर रघुवंश 'बनज बन', एक महापुरुष के वाक्य में इतना बड़ा प्रमाणपत्र मिल सके? एक, सामान्य प्रकार का जीवन है, माने सरल जीवन। रघुवंशीओं का जीवन सरल था। वे सम्राट थे; सामान्य नहीं थे। 'मानस' में तो लिखा है साहब! महाराज दशरथजी का वैभव ऐसा कि अयोध्या के राजकार्य से श्रमित होकर सोचे कि कहां आकर बैठूं? कई बार हमें क्राईसिस होती है कि कहां बैठे? सामान्य स्तर पर कहे तो कई बार ऐसी बैठक में बैठने के बाद हमें ऐसा लगे कि ये सब कहां चले गए? किसके साथ अब बैठे? पर ईश्वर कृपा कर दूसरी चेतना देते हैं। उनके साथ बैठकर आनंद कर सके। पहले बहू-बेटियों कमरे ओढ़कर बैठती थी। आज भजनानंदी साधुओं को कमरे में ओढ़ने का समय आ गया है! पर कहां, किससे बातें करें?

कभी तो वस्ल कभी हिज्र मार देता है।
नहीं है कुछ तो तेरा ज़िक्र मार देता है।

- राज कौशिक

कभी तेरी मुलाकात, कभी तेरा वियोग मार देता है! तेरा स्मरण मार देता है! गोस्वामीजी मानते हैं कि दशरथजी सुरसदन जाते, इन्द्र के दरबार में जाय। महापति कौशलाधीश पधारे तो इन्द्र खड़े हो जाय। नियमानुसार इन्द्र अपनी गद्दी खाली न कर सके और दशरथजी को दूसरे आसन पर बिठा न सके। इसलिए इन्द्र आधे आसन पर और आधे पर महाराज दसरथ पर बिराजे। इतना वैभव! रघुवंश में सरल जीवन एक मंत्र था। सादगीमय-सरल जीवन। रामराज्य में तो वर्णन है कि जानकीजी स्वयं गृहकार्य करती थी दास-दासियों के रहते हुए भी। रघुवंश में जन्मे हो वही रघुवंशी नहीं है, कोई भी रघुवंशी है, क्योंकि आख़िर हम सब तो सूर्य के नीचे है। हम सब सूर्यवंशी हैं। सादगीमय जीवन होना चाहिए। मैं यह नहीं कहता कि आप एन्जोय न कीजिए; अच्छे वस्त्र न पहने। मन सादगीमय होना चाहिए। रघुवंशी सामान्य आदमी की तरह जीते हैं। बड़े आदमियों को सादगीपूर्ण जीना चाहिए।

दूसरा है गौरवपूर्ण जीवन। कहीं पर जन्म हो तो आरती हो, बधाईयां हो। एक-एक प्रसंग उत्साह से मनाया जाता हो। ऐसा कई आदमियों का गौरवपूर्ण जीवन होता है। रघुकुल में सादगीमय और गौरवपूर्ण जीवन की स्थापना है। रघुवंशीय जीवन ऐसा है। तीसरा प्रकार कलंकी जीवन है। रघुवंश में कलंक? नज़र न लग

जाये इसीलिए काली बिंदी है। दशरथजी ने कहा, 'कैकेयी, अयोध्या में सब ठीक हो जायगा। पर तेरा कलंक गंगाजल भी धो नहीं सकेगा। भरद्वाजजी बोले कि भरतजी, आपके लिए यह कलंक हैं। चंद्र में भी कलंक है। यद्यपि भरत-चंद्र में कोई कलंक नहीं है। लेकिन भरत को लगता है, मैं कुल का कलंक हूं; मैं सांई द्रोही हूं; मैं कुल कलंकी हूं। माँ जानकी में कोई कलंक नहीं था। भगवान राम थोड़े दुर्वाद शब्द बोले और जानकीजी को स्वयं पवित्र साबित करने अग्नि में से गुज़रना पड़ा! यह बड़े कुल का लक्षण है। बुद्धपुरुष को, साधु को समझ न सके तो अफ़वा फैलते देर नहीं लगती! 'कबीरा बिगड़ गया!' क्या कबीरा बिगड़े? क्या जिसस क्राईस्ट का कोई अपराध था? वह प्रेममूर्ति का कोई अपराध? उन पर कलंक लगा! सोक्रेटीस पर कैसे-कैसे आरोप लगे? नरसिंह महेता पर अपनी ही जाति ने कलंक लगाए! साहब, प्रयोग कर-कर सिद्ध करने की कोशिश की! जेल में ड़ाला! नरसिंह मेहता को बिरादरी से निकाला। मुझे लगता है कि क्या नागर कोम की ताकत थी कि बिरादरी से निकाले? पर नागरों के इष्टदेव हाटकेश्वर महादेव ने नागरों को ऐसी बुद्धि दी कि इसे बिरादरी से बाहर निकाल दे। उसकी साधुता इतनी विशाल है कि बिरादरी में न समा सके। आप जलारामबापा को लोहाणा बिरादरी तक कैसे सीमित रखे? गौरव ले सकते हैं। 'भणे लोहाणो भागो।' इसे स्थूलरूप से पकड़कर अन्याय मत कीजिए। रविसाहब, भीमसाहब, खीमसाहब, दासी जीवण ये सब जिस कुल में जन्मे हो उसका गौरव अवश्य लीजिए। पर उन्हें बंदी न बनाए। राम सब के है। जलारामबापा सब के है। जिसस को कलंक दिया! नरसिंह मेहता को दुःखी

किया! मीरां को दु:ख दिया! उनके जाने के बाद उनके बारे में अच्छा लिखा जाता है! बाकी तो साधुओं ने जो सहन किया है वो तो उनका मन ही जानता होगा! उनकी समाधि को दंडवत् करते हैं, बाकी उन्हें उपाधि देने में कोई कसर नहीं छोड़ते!

चौथा जीवन हरिमय जीवन है। पूरा रघुवंश अनुष्ठानी वंश है। रघुवंश साधनापथ का पथिक है। पांचवां प्रकार असंग जीवन है। ये कमलवन है। रघुवंश एक ऐसा है जो अपनी परंपरा में असंगता को पकड़कर बैठा है। कमल असंगता का प्रतीक है। ऐसा लगे कि हमारे साथ है पर गहनता से सोचे तो लगे कि यह कुछ अलग तत्त्व है। छठ्ठा जीवन का प्रकार नीरोगी जीवन है। यह सोच-समझकर कहता हूं। बड़े से बड़े आदमी को भी बीमारी होती है। रमण महर्षि को केन्सर था। ठाकुर रामकृष्ण को भी केन्सर था। भगवान बुद्ध ने भी अंतिम आहार ऐसा लिया था तो पेट का दर्द बढ़ा। इसी बीमारी के कारण बुद्ध का निर्वाण हुआ। महावीर स्वामी ने भी यही भोगा। इन सब महापुरुषों को अस्वस्थता हुई। मैं किसी संप्रदाय या धर्म की बातें नहीं करता। पर सब यही कहते हैं, हमारे महापुरुषों को कुछ नहीं होता! उन्हें पसीना भी नहीं आता! वह ज़िन्दा है या नहीं यह तो देखिए! मृतक को पसीना नहीं होता, ज़िन्दा को होता है। पसीना होता है तो होने दीजिए। मैं नाम नहीं लूंगा। मुझे इसमें जाना नहीं है। अमुक ऊंचाई प्राप्त जीवन में ऐसा होता है। योगी चरमसीमा पर पहुंच जाय तो वर्णभेद हो जाता है। उनका रंग बदल जाता है; ऐसा होता है।

स्वस्थ जीवन माने मानव की बुद्धि-मन-चित्त-अहंकार ये सभी स्वस्थ होते हैं। रघुवंशीओं में एक सहज मन का स्वभाव है कि उनका मन कभी गलत रास्ते पर नहीं जाता। यह उनकी तंदुरस्ती है। रघुवंशी कभी भी अपनी बुद्धि से नेट वर्क बनाकर दूसरों को शीशे में नहीं उतारता! यह उसकी तंदुरस्ती का प्रतीक है। रघुवंशीओं का चित्त प्राय: विक्षेपमुक्त रहता है। राम के चित्त पर कोई असर नहीं हुई। आप को राज्य मिलता है, ऐसा कहा गया तो भी चेहरे पर कोई खुशी की रेखा नहीं थी। जब यह कहा गया, आप को बन में जाना है तो ग्लानि की रेखा नहीं थी। उनका चित्त प्राय: विक्षेपमुक्त रहता है। ऐसे छठ्ठा प्रकार नीरोगी जीवन है। यह सत्संग क्या है? मन स्वस्थ बनाने का प्रयोग है। सातवां और अंतिम प्रकार बलिदानी या कुरबानी का जीवन है; समर्पण का जीवन है। ये दूसरों के लिए ही जीते हैं। रघुवंशी दूसरों के लिए जीते हैं। सूर्य दूसरों के लिए जीता है। पेड़ भी अपने फल नहीं खाता। हम ऐसा न कर सके पर उनका स्मरण तो करे। रघुवंशी होने का विशेष आनंद लें।

किसी भी बुद्धपुरुष के जीवन में यह सातों प्रकार के जीवन का समावेश होता है। मैं कहता हूं, भाणसाहब के जीवन में रघुवंश के ये सातों जीवन का समावेश है। उनका जीवन सादगीमय था। रघुवंशी का दूसरा लक्षण गौरवपूर्ण जीवन जो भाणसाहब में दिखाई देता है। गर्वपूर्ण नहीं, गौरवपूर्ण। कोई भी महापुरुष जगत में लोकसंग्रह के लिए आते हैं तब लोग कहीं न कहीं आक्षेप करते हैं! नरसिंह मेहता और अन्य महापुरुषों के दृष्टांत हमारे पास है। गांधीजी की टीका और निंदा करने, बदनाम करने के क्या कम प्रयत्न हुए हैं? जो नज़दीक थे उन्होंने ही बहुत किया!

आग तो अपने ही लगाते हैं।
गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

आग तो अपने ही लगाते हैं! पराये तो हवा देते हैं। भाणसाहब मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार से बिलकुल नीरोगी महापुरुष है। भीतर से पूर्ण स्वस्थ है। इतनी बड़ी शक्ति थी उनमें, गौरवपूर्ण जीवन था। इसीलिए तो समाधि ले ली। भाणसाहब का असंग नीरोगी जीवन। ये सब के साथ हो फ़िर भी अलिप्त! भाणसाहब के समर्पित जीवन पर सभी गौरव ले सकते हैं। जितना ज्यादा गौरव ले उतना वजन भी उठाना चाहिए। ये सभी मूल्यवान चरित्र है। परशुराम भगवान राम से कहते हैं, 'हे राघव, तू रघुवंश के कमलवन का भाण है, सूर्य है।

बाप! थोड़ी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा अपने भीतरी विकास और विश्राम की बातें की। अब जो समय बचा है उसमें कथा क्रम ले। 'रामचरित मानस' में याज्ञवल्क्य महाराज ने शिवचरित्र का आरंभ किया। कथा तो रामकी है परन्तु जवाब में प्रथम शिवचरित्र गाया है। एकता सिद्ध की है, जो तत्त्वत: पहले से थी ही। हम संकीर्णता के कारण अलग पड़ जाते हैं। भरद्वाजजी ने रामतत्त्व के बारे में जिज्ञासा की है। याज्ञवल्क्यजी ने प्रसन्नता से शिवचरित्र शुरू किया है। एक बार त्रेतायुग में भगवान शंकर जगजननी भवानी को साथ लेकर कथाश्रवण हेतु कुंभजऋषि के आश्रम में गए। साकेतवासी पंडित रामकिंकरजी से सुना है कि शिव ने इसका ऐसा अर्थ किया कि मैं कथा सुनने आया हूं। वक्ता कुंभज है। मुझे इनकी पूजा करनी चाहिए। लेकिन धन्य है यह महापुरुष कि जो श्रोता की पूजा करने लगे! परन्तु दक्षपुत्री सती ने इसका गलत अर्थ किया, हम आए तब जो आदमी हमारी पूजा करने लगा वो क्या कथा करेगा? भगवान शंकर परम सुख से कथा में लीन हुए। सती ने ध्यान न दिया। कथा चुक गई! कथा पूरी हुई। भगवान शिव को लगा कि मुझे महाराज को पत्र-पुष्प समर्पित करना चाहिए। कहा, महाराज, मैं आप की क्या सेवाकर सकता हूं?' कुंभज ने कहा, महाराज, आप भक्ति के भंडारी हैं। आप मुझे भक्ति का दान दीजिए। शिव ने ब्रह्मजिज्ञासा की; राम जिज्ञासा की। और कुंभजऋषि ने भक्ति की जिज्ञासा की।

शिव और सती बिदा लेकर निकलते हैं। वर्तमान त्रेतायुग में राम की लीला जारी थी। रावण यतिवेश में सीता का अपहरण करता है। सीता के वियोग में प्राकृत मानव की तरह रोते हैं। सीता की खोज में निकल पड़ते हैं। भगवान शिव राम को देख लेते हैं। पहचान गए कि ये मेरे इष्टदेव स्वयं परमात्मा है। शिव को मन में आनंद हुआ। सती साथ है परंतु बौद्धिक पर्दे के कारण देख नहीं पाती। भगवान भावविभोर होकर सच्चिदानंद रटने लगे। भगवान को इतने भावविभोर देखकर सती के मन में प्रश्न उठा कि यह कौन है? मेरे पति 'सच्चिदानंद' बोलकर उनको क्यों प्रणाम करते हैं? अंतर्यामी शिव समझ गए। कहा, देवी, यह आपका नारी स्वभाव है। ऐसा संशय मत कीजिए। जिनकी कथा कुंभज ऋषि ने गाई, वे मेरे इष्टदेव है; रघुवीर है। यह व्यक्ति के रूप में दिखते है परंतु व्यापक है; ब्रह्म है। ब्रह्मांडों के अधिपति है; मायापति है; निजतंत्र-स्वतंत्र है। यह

> जो बुद्धपुरुष हो, रूखड हो उसे कोई समझ नहीं सकता। अत: अफवाह फैलते देर नहीं लगती! 'कबीरा बिगड़ गया!' क्या कबीरा बिगड़ सकता है? जिसस क्राइस्ट का क्या अपराध? क्या इस प्रेममूर्ति का कोई अपराध है? उन पर आरोप लगा! सोक्रेटीस पर कैसे-कैसे आरोप लगे! नरसिंह मेहता पर उनकी बिरादरी ने ही आरोप लगाए! जिसस को कलंक लगा! मीरां को दु:ख दिया! वह व्यक्तित्वों के जाने के बाद उनके बारे में अच्छा लिखा जाता है! बाकी साधु ने जितना सहन किया हो वह उसका भीतर ही जानता है! अभी उनकी समाधि को दंडवत् प्रणाम करते हैं बाकी उन्हें उपाधि देने में हम कोई कसर नहीं छोड़ते!

रघुकुल मणि है। पर सती उपदेश समझ न पाईं। काफ़ी समझाने की कोशिश की पर सती नहीं मानी। भगवान शिवजी हंसे। माया के बल में मेरी पत्नी भी फ़ंस गई है! हम तो सांसारिक है। इस पर से बोध मिलता है कि तमाम प्रामाणिक प्रयासों के बावजूद भी यदि समझ में न आए तो गुस्सा नहीं करना है। बात टाल देनी है। शिवजी ने कहा, 'देवी, मेरे कहने से भी आपका संशय नहीं टला तो जाकर परीक्षा लीजिए। परीक्षा करने राम के पास जाईए। अंधेरे में मत भटकिए। उजाले की ओर जाय। सामने परब्रह्म की ज्योत है। अखंड है।' सती ने भी स्वीकार किया क्योंकि बौद्धिक को परीक्षा लेना अच्छा लगता है। पर ईश्वर परीक्षा का विषय नहीं हैं, प्रतीक्षा का विषय है। सती परीक्षा करने जाती है। भगवान राम और लक्ष्मण जानकी की खोज हेतु ललित नरलीला कर रहे हैं। सती सीता का वेश धारण करती है। वे राम-लक्ष्मण के सामने खडी हो जाती हैं। ईश्वर समक्ष जाना अच्छा है पर साधन शुद्ध होना चाहिए। सती का साधन शुद्ध नहीं है। ईश्वर के सामने तो शूर्पणखा भी गई थी। उनके कान-नाक कट गए क्योंकि साधन शुद्ध नहीं था। गांधीजी साधन की शुद्धता की अपेक्षा रखते थे। नहीं तो बात वही होती हैं पर सफलता नहीं मिलती। चुराया कंबल ओढ़ ले तो सर्दी नहीं लगती पर डर नहीं जाता। और दो सौ रूपये की खरीद कर ओढ़े तो सर्दी भी जाय और भय भी। चुराया कंबल डर पैदा करता है कि कहीं पुलिस आ गई तो? भगतबापू की पंक्ति है-

झडपेलुं अमी अमर करशे,
पण अभय नहीं आपी शकशे।

कहीं से छीना अमृत अमर बना दे पर निर्भय न बना सके। सती का साधन शुद्ध नहीं था। सीता बनकर सामने गई। भगवान राम ने सीता को प्रणाम किया। पहचान गये कि यह तो जगदंबा सती है। पूछा, 'माताजी, आप अकेली क्यों? भगवान शंकर कहां है?' सती पकडी गई! जवाब न दे पाई। भाग निकली! परमात्मा ने अपना ऐश्वर्य बताया। सती शिवजी के पास पहुंची। हंसते-हंसते भगवान शंकर ने पूछा, किस तरह परीक्षा ली? सती मुकर गई। शिव समझ गए। मेरा भोलेनाथ परम उदार है। सोच में पड़ गए कि अब कैसे भक्ति का निर्वाह करे? यह धर्मसंकट या मृत्युसंकट नहीं है, प्रेमसंकट है। धर्मसंकट सरल होता है। मृत्यु संकट तो और भी सरल है। मेरी व्यासपीठ इसे प्रेमसंकट कहती है। प्रेमधर्म अलग है। संतों ने पंचम पुरुषार्थ कहा है। शिव धन्य है। अपनी बुद्धि से कुछ नहीं करते। अंदर से प्रेरणा होती है। सती और मेरा कोई मिलाप नहीं। सांसारिक गृहस्थ जीवन का संबंध पूरा हुआ। क्योंकि उसने सीता का रूप लिया। सीता मेरी माँ है। सती के साथ प्रीत रखूं तो भक्तिमत छूटता है। अनीति हो जाती है।

शिवजी कैलास पहुंचते हैं। वहां अपनी प्रतिज्ञा पर विचार करते-करते अपने भवन के बाहर सहज आसन में बैठ गए। स्वरूप के साथ अनुसंधान करने के साथ ही 'लागी समाधि अखंड अपारा।' सती समझ गई कि मेरा त्याग किया है। सत्तासी हजार वर्ष बीते। भगवान शंकर सहसा जगते हैं। भगवान राम के उच्चार के साथ बाहर आते हैं। सती सन्मुख हुई। शंभुचरण में प्रणाम करती है। शिवजी को लगा, सती बहुत दु:खी है। रसपूर्ण कथा कहूं जिससे उनका मन लगे। महादेव कथा को माध्यम बनाते हैं। ये मैंने निर्मित किया हुआ माध्यम नहीं है। आदि-अनादि काल से यह कथा का माध्यम है, जो सभी बिमारियों की औषधि है। शिवजी कथा शुरू करते हैं। पर कई बार काल और माया की प्रबलता के कारण विघ्न आते हैं। दशरथ ने यज्ञ शुरू किया। देवता वायुयान लेकर निकले। वहां सती का ध्यान गया। दूसरा प्रसंग खडा हुआ। कल हम ये सब बातें करेंगे।

हम सब प्रकाश की संतान हैं

बाप! 'मानस-रघुबंस', इस कथा का केन्द्रीय विचार है। शुरूआत में हम जरा इसकी बातें करें। एक पंक्ति आज मैंने बदल दी है क्योंकि पहले दिन जब मैं कथा में आया तब मेरे मन में आया, उस वक्त ये पंक्ति मुझे याद नहीं आ रही थी इसीलिए 'जय रघुबंस बनज बन भानू।' जहां रघुवंश का उल्लेख है। फिर 'बड़भागी बन अवध अभागी।' जो पंक्ति मेरे दिमाग में आई, उसमें 'रघुबंस' शब्द है ये ली। लेकिन कल शिवचरित्र के प्रवाह में एक पंक्ति आई। क्योंकि प्रसंग शुरू होता है तो चौपाई आती-जाती है, इसीलिए स्वाभाविक ये चौपाई आई कि-

तेहि अवसर भंजन महिभारा।
हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा।।

मुझे लगता है कि ये पंक्ति 'मानस-रघुबंस' के लिए एकदम उपयुक्त है। इसीलिए 'मानस-रघुबंस' की अब दो प्रधान पंक्तियां ये रहेगी, 'तेहि अवसर भंजन महिभारा।' पृथ्वी का भार उतारने के लिए साक्षात् परमात्मा, हरि, नारायण ने रघुवंश में अवतार लिया। जिस रघुवंश में राम अवतार हुआ उसकी स्तुति करके परशुरामजी ने कहा-

जय रघुबंस बनज बन भानू।
गहन दनुज कुलदहन कृसानू।।

प्रसंग के अनुरूप बहुत से प्रश्न आए हैं, खास कर गांव के भाई-बहनों के। उनमें से एक प्रश्न ऐसा आया कि 'बापू, यहां रघुवंशी भाईओं जो बापा की समाधि के आश्रित हैं; रघुवंशी संमेलन भी हुआ, उसमें ऐसा कहा गया कि हम तो रघुवंशी है। इतना ही नहीं, आदरणीय आनंदीबहन भी आई तब उन्होंने भी कहा कि पटेल समाज, लेउवा और कडवा पाटीदार; रघुवंशी की बात भी कही। कई लोग मुझे पूछते हैं कि हम कहां से?' एक बात कहूं बाप! जिस कुल में आए हैं उसका गौरव लेना, परंतु पूरा जगत तो दो वंशों में से आया है। एक सूर्यवंश, दूसरा चंद्रवंश। केवल भारत ही नहीं, विदेश में भी इनमें से ही है। पूरी दुनिया सूर्य और चंद्र के नीचे है। हम भी उनमें से है। इसीमें हमें जीना है। हां, फिर हम अपने कृत्यों के कारण निशाचरवंशी बन जाते हैं! तीसरा वंश खड़ा हो जाता है असुरवंश, ये हमारे कर्मों से, ऐसा तुलसी मानते हैं। नहीं तो मूल में तो दो ही है या फिर एक ही है। हम सब प्रकाश की संतान है। जैसे ग्रंथकारों ने कहा है कि 'वयम् अमृतस्य पुत्रा:।' हम अमृत के पुत्र है। पता नहीं प्रारब्ध, काल, कर्म, स्वार्थ, छोटे-बडे नेटवर्क हमें अंधेरों के बना देते हैं! नहीं तो हम उजाले की संतान है, कालिदास ने जब 'रघुवंश' का लेखन शुरू किया तब भगवान शिव और पार्वती की वंदना करते हैं-

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगत: पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

मुझे बहुत अच्छा लगता है। कालिदास ने पहले गणेश की वंदना नहीं की, राम की वंदना नहीं की, कृष्ण की भी नहीं,

जगत के माता-पिता महादेव, पार्वती के चरणस्पर्श करे। कहां उदात्त सूर्यवंश और कहां मोह में डूबी मेरी अल्पबुद्धि? कहां अपार समुद्र और कहां मेरी छोटी-सी नाव? कहां ऊंचा कुल और कहां मैं ठिंगना व्यक्ति? फिर भी मनीषियों ने मोती को तीक्ष्ण लोहे की धार से छेदा है। मोती को छेदना कठिन है। कालिदास आश्वासन लेते हैं कि जिन ऋषिमुनियों ने, वाल्मीकि, व्यास आदि ने मोती को छेदा है उसमें धागा पिरोना मेरे लिए आसान हो जाएगा। सबसे पहले 'रामायण' के मूल में कोई है तो वो है आदिकवि वाल्मीकि। इस जगत में जितनी भी 'रामायण' आई उन सबका मूल है वाल्मीकि। हां, 'मानस' जगत में अनादि कवि शिव माने जाते हैं। परंतु 'रामायण' के रूप में जिस ग्रंथ को लेकर हम बैठे हैं ये तो 'रामचरित मानस' है और 'मानस' के रूप में रचना सबसे पहले शिवजी ने की थी।

तो मूल में आदि कवि वाल्मीकि की तीन 'रामायण।' थोड़ा परिचय लें। जो गुरुकृपा से मुझे थोड़ा समझ में आया। अब तो मैं ये सब भूल जाउं तो ज्यादा अच्छा। मेरे लिए ये ('मानस') एक ही रहे बस! केवल दो ही याद रहे। एक गुरु और दूसरा राम। एक बुद्धपुरुष, एक सद्गुरु का दिया मंत्र याद रहे फिर सब याद करने की क्या आवश्यक्ता? परंतु छत पर पहुंचने के लिए अनेक सीढ़ी चड़नी पड़ती है। अब तो लिफ्ट होती है! और सबको केसेटों की लिफ्ट मिल गई है! कहीं भी सुनकर खुद का नाम चढ़ा देते हैं। पर पहले गुरु की सेवा करनी पड़ती थी। नसीब लिफ्ट का काम करता है परंतु पुरुषार्थ को तो सीढ़ी ही चढ़नी पड़ती है।

तो बाप! 'वाल्मीकि रामायण' तो वाल्मीकि का ही है। वाल्मीकि के नाम तीन 'रामायण' है। एक 'आनंद रामायण', दूसरी 'अद्भुत रामायण।' ये सब ग्रंथ चालीस साल पहले देखे थे। एक चौथी 'रामायण' भी है, 'अध्यात्म रामायण', जो व्यासकृत है। व्यास ने 'महाभारत' भी लिखा है, 'रामायण' भी लिखा है। जिस समय मैं अध्ययन करता था तब गुरुकृपा से ये जाना। इनमें से एक 'रामायण' 'कंब रामायण' जो साउथ में से आया। थोड़ा मेरे रस का विषय रहा 'उत्तर रामचरित'-भवभूति। और अभी जिसकी बात चल रही है वो है 'रघुवंश'-महाकवि कालिदास। तो तीन वाल्मीकि के, एक व्यास का, पांचवां कंब। 'उत्तररामचरित' छ, सात 'रघुवंश।' आठवां कवि राजशेखर का 'बाल रामायण' और सबसे अधिक आनंद देनेवाला हनुमान द्वारा लिखित 'रामायण'-'हनुमंत नाटक।' ऐसा कहा जाता है कि पत्थरों पर हनुमानजी ने अपने नाखूनों से 'रामायण' लिखा है। 'हनुमंत नाटक' बहुत सुंदर है। लेकिन बाद में उसे पानी में बहा दिया! और फिर पानी में से उसके भूखंड बाहर निकाले गये और उसकी वाचना हुई। उसे पढ़ने की कोशिश हुई। फ़िर तो 'शतकोटि रामायण', कई 'रामायण' आयें। लेकिन मेरे पास 'रामचरित मानस' आया। और उसमें सब कुछ आ गया।

संक्षेप में, हमारे यहां सौ करोड 'रामायण' है। तुलसी के बाद कोई नहीं। किसी की जरूरत ही नहीं पड़ी। पड़ेगी तब वापस आएगा। यहां 'संभवामि युगेयुगे' का वचन दिया गया है। 'रामचरित मानस' अंतिम शास्त्र है। ये अर्क है। ये सत्य, प्रेम और करुणा का निचोड है। देश-काल के अनुसार मूल को पड़कर फूल खिलने चाहिए। परंतु बात आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसी है कि साधु एक जगह बैठा रहे तो आसक्ति होने की संभावना है कि साधु तो घूमते रहते हैं। मंडलियां भी घूमती। संस्कृति का जागरण था। ये प्रचार करने के लिए नहीं निकलते थे। जो भूल गये थे उन्हें याद दिलाने निकलते थे। साधुओं का, सद्गुरुओं का, मूल देवताओं का तप इतना है कि गाडी भरकर उनके स्थान पर डाल जाय! भटकने की कोई

जरूरत नहीं। परंतु राम को याद करने की जरूरत है। ये परिव्राजकता है। साधु को परिव्राजक रहना चाहिए। राजा को घूमना चाहिए। साधुओं और सत्ताओं को लोगों के निकट जाना चाहिए।

रघुवंश का केन्द्रबिंदु तो अयोध्या है परंतु विस्तार के लिए रघुरथ समुद्र तक जाता था। और उसके सोलह लक्षणों में से एक है कि स्वर्ग में इन्द्र के पास जाने का रास्ता किया। इस रघुवंश को हम राम तक जानते हैं। तुलसी ने भी आगे लव-कुश के नाम से कथा नहीं लिखी। इन्द्र को बचाने के लिए रामपुत्र कुश रथ ले के स्वर्ग में जाते हैं और वीरगति को प्राप्त होते हैं। सुरासुर संग्राम में इन्द्र की मदद करने के लिए दशरथ भी गये थे। इतिहास बहुत अद्भुत है! सियासत को बहुत ही विनय के साथ प्रार्थना है कि हमारे इतिहास में जो मिलावट हो गई है उसे ईमानदारी से हटाना चाहिए। एक जगह बैठने से आसक्ति होती है। साधु घूमते रहते हैं। हमारे यहां उपनिषदीय मंत्र है, 'चरैवेति।' व्यापारीयों को घूमते रहना चाहिए। वणिक और भिखारी; बारीश आती है तब भिखारी एक जगह रुक जाता है। फिर वापस निकल पड़ता है कि कहां से ज्यादा भीख मिलेगी? इस तरह यह चार जनों को घूमते रहना चाहिए, ऐसा लिखा है।

तो बाप! समय-समय पर इसमें परिवर्तन होता रहता है। जैसे चातुर्मास को दो महिने का कर दिया। चातुर्मास का विचार अद्भुत है। परिभ्रमण करने से हमारी शक्ति, हमारी उर्जा बढ़ती है। और दो महिने के विराम से शक्ति, उर्जा को वापस पाया जाता है। साधुओं को घूमते रहना चाहिए। हमारा जन्म इसके लिए ही हुआ है। जब तक काया चलती हो तब तक घूमते रहना चाहिए। हमें सबकुछ समाज ने दिया है। घी, रोटी, समाज की खाते हैं तो उसका बदला तो देना ही होगा। समाज खुद के बच्चों को घीवाली रोटी नहीं खिलाता साहब, पर मैं भिक्षा लेने जाउं तो कहीं से भी करके रोटी पर घी लगा के मुझे देता है। और उस समय हमारी जवाबदारी है कि उसका बदला दे। फिर उम्र हो जाए तो बैठ जाय। कालिदास के अनेक भावों को तुलसी खुद की तरह से प्रगट करते हैं। ये 'वागर्थाविवसंपृक्तौ' ये सीधा कालिदास का है। पर संत ने अपनी मौलकिता डाली है। कोई ये ना कहे कि तुलसी ने सीधा उतार लिया है। तुलसी ने उतारा नहीं किया, तुलसी अवतार के रूप में उतरे हैं।

तो बाप! मूल केन्द्र में तो रघु है। रघुवंश के आदर्शों का वर्णन जब कवि कालिदास ने किया तब पहला लक्षण बताया कि रघुवंश में जन्म लेनेवाले तमाम राजा जन्म से ही शुद्ध थे। जिनके माता-पिता ने जन्म देने से पहले से ही खुद के संसार में तप, सेवा की हो उन्हें जन्म से ही शुद्धि मिलती है। राजा दिलीप का तप, गौसेवा, ये दिलीप जब वशिष्ठ के आश्रम में जाते हैं तो रानी सुदक्षिणा के साथ। फिर गौपालक, गरीब लोग कहते हैं कि हमारा राजा निकला है। क्या प्रजाप्रेम था! पांच साल में ही नहीं जाना चाहिए! रोज जाना चाहिए, गांव-गांव, घर-घर। हम सबको इसमें से सीखना चाहिए कि लोग कितने उदार थे! साधु को धान पक जाए तब नहीं जाना चाहिए। अकाल में तो हिंमत देने के लिए ज्यादा जाना चाहिए कि कोई बात नहीं बेटा, तुने जो दिया वो हमारे अन्नक्षेत्र में भरा है। तेरा दिया हुआ सम्मान के साथ ग्रहण करने आना।

दिलीप आते हैं। ऋषि यज्ञशाला में से बाहर आ के स्वागत करते हैं। दिलीप रथ में से नीचे उतरकर आश्रम की धूल में दंडवत् प्रणाम करते हैं। ऋषि आशीर्वाद देते हैं। फिर पूछते हैं कि आपके आगमन का कारण क्या है? तब दिलीप कहते हैं कि प्रभु, संतान नहीं। आपके आशीर्वाद से मार्ग तो सुंदर पकड़ा है। भूल हुई हो तो क्षमा करना पर गुरुदेव, हम गृहस्थ है। गुरु

कहते हैं, तेरे यहां पुत्र जन्म ले चुका होता परंतु तूने एक भूल करी कि तू अपनी पत्नी के साथ स्वर्ग में इन्द्र से मिलकर वापस आ रहा था तो कामधेनु गाय खड़ी थी, जो अभी पाताल लोक में है। और तुम्हारे सम्मान में वाजिंत्र बज रहे थे, इन वाजिंत्रों में तू भूल गया और कामदुर्गा गाय की तुने परिक्रमा नहीं की! तू राजा है इसलिए बिरुद लगे 'गौब्राह्मण प्रतिपाल।' तुझे शाप मिला है। गाय किसी दिन शाप नहीं देती। अस्तित्व ने शाप दिया। आप राम का अपमान करो तो राम नहीं चिड़ते परंतु संतों का अपमान करो तो हानि होती है। किसी साधु का मन नहीं दु:खाना। साधु मतलब विशेषणमुक्त साधु के लिए कह रहा हूं। 'रामायण' में लिखा है-

साधु अवग्या तुरत भवानी।
कर कल्याण अखिल के हानी।।

साधु की अवज्ञा हो तो पूरे अखिल की हानि होती है। गुरु कहते हैं कि तुम्हें शाप मिला है, तो उस कामधेनु की पुत्री जिसका नाम नंदिनी है, उसकी सेवा दोनों करो। पुत्रप्राप्ति होगी। नंदिनी गाय जब खड़ी हो तो खड़ा रहना। बैठे तो बैठना। नंदिनी पानी पीये उसके बाद पीना। आंख बंद ना करे तब तक विश्राम नहीं करना। इस तरह कठिन व्रत पकड़ाए। दिलीप मन से सेवा करते हैं। ऐसे में कसौटी भी होती है। एक शेर गाय का शिकार करने आता है। राजा धनुष-बाण उठाते हैं। तो शेर कहता है कि राजा, तुझे अभी बहुत कुछ देखना बाकी है। राजा ने कहा, नहीं, चाहे मेरा सब कुछ लूट जाए पर देश की गाय बचनी चाहिए। दुनिया के दूसरे प्रदेश गाय का दूध पीते हैं और जहां कृष्ण ने गाय चराई, दिलीप ने गाय चराई उस देश में गाय की ये दशा? गाय को पूज्य गिनो तो अच्छा, थोड़ा कंकु माथे पर चढ़ा के गाय को प्रेम करो। प्रेम करेंगे तो ऐसा लगेगा कि हम जिसको प्रेम करते हैं उसकी हत्या नहीं होनी चाहिए।

शेर के साथ दिलीप बात करते हैं। आखिर शेर प्रसन्न होता है क्योंकि वो शेर नहीं था। ये तो एक परीक्षा थी। ये तो शंकर भगवान का वृषभ था। इस देश की खेती करनेवाला बैल, इसकी ताकत कितनी कि इसकी पीठ पर पैर रखकर शंकर कैलास पहुंच जाते हैं! हमारी कृषिविद्या आशीर्वाद देती है, मनोरथ पूरा होगा। फिर गुरु ने बात सुनी और कहा कि आज जिस गाय को दोह उस गाय का दूध पात्र में ले के तुम और रानी पीना। दोनों ने दूध पीया। गुरु की कृपा से सुदक्षिणा सगर्भा स्थिति का अनुभव करती है। मुझे यहां कहना है कि जन्म से वो ही शुद्ध होता है जिनके माता-पिता ने तप किया हो; समाजसेवा की हो। रघु का जन्म होता है। कालिदास ने शुरूआत के ही श्लोकों में रघु के आदर्शों को सोलह के अंक में लिखा है। अब अगर हम रघुवंशी कहलाते हैं तो कहलाने चाहिए परंतु इन सोलह में से जितना हो सके उतने लक्षण आने चाहिए। रघुवंश के सोलह लक्षण जो महाकवि कालिदास ने लिखे हैं-

सोऽहमाजन्मशुद्धानामाफलोदयकर्मणाम्।
आसमुद्रक्षितीशानामानाकरथवर्त्मनाम्।।
यथाविधिहुताग्नीनां यथाकामार्चितार्थिनाम्।
यथापराधदण्डानां यथाकालप्रबोधिनाम्।।
त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम्।
यशसे विजिगीषुणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।।
शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्द्धक्ये मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।

सोलह लक्षण रघुवंशी के लिए ही नहीं, हम सब के लिए भी जरूरी है। और मैं विनय के साथ कहता हूं कि सोलह में से हम बहुत सीख सकते हैं। कोई हम से ये कहे कि ये आदर्श है कि उल्टे सिर के बल तप करो। तो जब मैं ही नहीं कर रहा हूं तो आपको सलाह कैसे दे सकता हूं? उपवास करके पूरे परिवार पर क्रोधित हो इससे अच्छा कि तीन टाईम खा लो चुपचाप! इसी तरह जो प्रदर्शनी तप करता है उसके मुख पर कभी हास्य नहीं होता। मेरी दृष्टि में मुस्कुराहट ही मोक्ष है। दूसरी मुक्ति का पता नहीं पर मनुष्य हंसता हुआ चला जाए वो सबसे बड़ा मोक्ष।

मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं, मोजमां रे'वुं रे,
अगम अगोचर अलखधणीनी खोजमां रे'वुं रे...

तो मुस्कुराहट मुक्ति है, मोक्ष है। कविवर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टागोर कहते हैं कि फूल की सभी पंखुडियां खिल जाय उसका नाम निर्वाण है। ऐसे ही मनुष्य की बत्तीसी खिल जाए तो मोक्ष है। अभी कलियुग में तप का काल नहीं है। हरिनाम लो साहब! बाकी जो तप करता हो उसे मेरा प्रणाम पर अतिशय उपवास करो फिर मूंह बिगाड़कर हमारे साथ हंसो भी नहीं! हमनें गुनाह किया है?

रघुवंशीओं का पहला लक्षण 'सोऽहमाजन्म-शुद्धानाम्'; जिनके माता-पिता तपस्वी और सेवाकार्य से भरे होंगे ऐसे कुल में जिसका जन्म हुआ। 'आफलोदयकर्मणाम्', ये रघुवंश का दूसरा लक्षण कि जब तक फल की प्राप्ति न हो, कर्म करते रहो। युवा भाई-बहनों, हजार बार फेल हो जाओ परंतु परिणाम लाने के लिए लगातार पुरुषार्थ करते रहो। 'आसमुद्रक्षिती-शानामानाकरथवर्त्मनाम्।' इस लक्षण के बारे में मैंने पहले कहा कि अयोध्या में ही पाटनगर था परंतु राज्य का विस्तार समुद्र तक था। रघुवंशीयों का चौथा लक्षण, ये स्वर्ग में जाने के रास्ते बताते थे। छोटा मानव ऊंचाई तक पहुंच सके ऐसी सुविधा उत्पन्न करते थे। इसका प्रासंगिक अर्थ ये लगाना चाहिए कि हमारे जैसे मृत्युलोक वाले व्यक्तियों को ऐसी उच्चता दी होगी कि छोटे से छोटा व्यक्ति भी शिखर पर चड़ सके। ये रघुवंश का चौथा लक्षण।

पांचवां लक्षण 'यथाविधि हुताग्नीनाम्', रघुवंशी रोज अपने आंगन में हवन करते थे। और हमारे गांव अभी भी करते हैं। मैंने तो गांव देखे हैं। बहुत से मानवों का व्रत होता है। गांव के लोगों को मंत्र नहीं आते; न्हाया-धोया भी नहीं लेकिन हाथ-पैर, मूंह धो के खाना खाने बैठे तो पहले नलिया में अग्नि देते फिर उसमें घी के छीटे मारते हैं। रघुवंशीयों का राजा अग्निहोत्री था जिसके आंगन में रोज आहुति दी जाती थी। फिर 'यथाकामार्चितार्थिनाम्।' आंगन या द्वार पर आये याचक को यथाशक्ति देना; कभी ना नहीं कहे। और अभी तक हम द्वार पर आये हुए को कुछ न कुछ देते ही है। युवान भाई-बहनों, आप सबको बिनती कि द्वार पर आये हुए को कुछ नहीं दो तो कागबापू कहते हैं ऐसे -

तारे आंगणिये कोई आशा करीने आवे रे,
आवकारो मीठो आपजे रे जी...
तारे काने कोई संकट संभळावे रे,
बने तो थोडुं कापजे रे जी...

हमारे यहां दो ही वंश है, एक सूर्यवंश और दूसरा चंद्रवंश। हम सब इन्हीं में से है। सिर्फ़ भारत ही नहीं, विदेश में भी इसी में से है। पूरी दुनिया सूर्य और चंद्र के नीचे है। उसके नीचे हम अवतरित हुए हैं और इसी में हमें जीना है। हां, फिर अपने कृत्यों के कारण हम निशाचरवंशी बन जाते हैं! तीसरा वंश खड़ा होता है असुरवंश; ये हमारे कर्मों से बनता है, ऐसा तुलसी मानते हैं। बाकी मूल में तो दो ही है या एक ही है। हम सब सूर्य अथवा प्रकाश की संतान है। हमारे स्वार्थ, संकीर्ण हेतु, अपने छोटे-बडे नेटवर्क ये सबने हमें अंधेरे का बना दिया है! बाकी तो हम प्रकाश की संतान है।

पैसे तो जिसके पास हो वो देते हैं पर सबके पास मीठा बोल तो है। तो उसके कंधे पर हाथ रखकर मीठा बोल तो बोल सकते हैं। जो दे वो रघुवंशी।

आगे का लक्षण राजा के लिए राजनीति का उपयोगी सूत्र, 'यथापराधदंडण्डानाम्'; जो अपराधी ना हो उसको कभी दंड ना दो। मैं तो साधुपक्ष में हूं। दंड में मानता ही नहीं परंतु जगत के संचालन के लिए दंडनीति होनी ही चाहिए। हमारे यहां अपराधी को सजा देने में बहुत देर लगती है! वर्षों तक लटका रहता है! फैसला जल्दी देना चाहिए। रघुकुल का नियम था कि निरपराधी को कभी दंड नहीं दिया जाता। दंडनीति का रघुवंशी पालन करते थे परंतु रामराज्य आया तब ये भी निकल गया साहब! आगे का लक्षण 'यथाकालप्रबोधिनाम्', योग्य समय जागना। राजा वो है जो योग्य समय जाग जाय। इसका अर्थ मेरे अनुसार ये कि राजा को जागृत होना चाहिए ये रघुवंश का लक्षण है। 'त्यागाय संभृतार्थानां', ये आगे का लक्षण है। कालिदास ऐसा कहते हैं कि बहुत जमा करते थे रघुवंशी। पैसा जमा करते परंतु इसलिए कि त्याग कर सके, दूसरों को दे के हम उपयोगी बने। मनुष्य को कमाना चाहिए परंतु दूसरों के लिए त्याग भी करना चाहिए। हम गृहस्थ है तो भविष्य के लिए इकठ्ठा करना चाहिए। हम त्यागी नहीं पर हो सके उतना दूसरों को देना। वेदों ने कभी कमाने की मना नहीं की। खूब कमाओ। नर बन के कमाओ परंतु नारायण बनके उसका उपयोग करो। कोई दवा के बिना रह जाता हो तो उसका पालक बनना। कोई भूखा हो तो भोजन देना। कमाई का दसवां भाग निकालना। और जिस दिन ये भाग निकलेगा उस दिन सरकार, संस्थाओं का काम कम हो जायेगा; पूरे गांव का उत्कर्ष हो जायेगा। विनोबाजी ने ये प्रयोग किया।

'सत्याय मितभाषिणाम्', सत्य चुके नहीं इसलिए राजा कम बोलते परंतु सत्य और मधुर बोलते। मित मतलब सीमित, संक्षिप्त। हम ज्यादा बोलने जाते हैं तब भूल करते हैं और असत्य भी बोला जाता हैं। 'यशसे विजिगीषुणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।' रघुकुल के राजा युद्ध करते पर दूसरों को मार देने के लिए नहीं, रघुकुल की कीर्ति बढ़ाने के लिए। आगे 'प्रजायै गृहमेधिनाम्।' राजा संसारी थे परंतु प्रजातंतु का विच्छेद ना हो उसके लिए गृहस्थ जीवन जीते थे। कुल में सिद्धांतों का पालन करनेवाला आए इसलिए संसारी थे, गृहस्थ थे। 'शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां', बचपन में रघुवंशी अध्ययन में व्यस्त रहते। कोई सांख्य, कोई न्याय, योग, ब्रह्म आदि शिक्षा का अध्ययन करते और एक कुशल राजा बनते।

बालकों को पढ़ाना बाप! मैं हर झोंपडे में जाकर पूछता हूं कि बच्चों को पढ़ाते हो? लगभग हां ही होती है। कहीं पर ना भी होती है, तो मैं बिनती करता हूं कि बच्चों को पढ़ाओ। बच्चे शिक्षा से वंचित नहीं रहने चाहिए। और शिक्षणनीति भी मेहरबानी करके ऐसी आये कि भारतीयता बनी रहे। ग्रामीण जनता से प्रार्थना कि बच्चों को पढ़ाओ और कोई मुश्किल हो तो आसपास के देवस्थानों से कहो। क्योंकि ये सब मेरी बात रखते हैं। ऐसा है तो तुम्हें तलगाजरडा तक नहीं आना पड़े। और आओगे तो मुझसे जो बन सकेगा मैं करूंगा। भारत का बचपन विद्या बिना ना रहे। एक अद्‌भुत सूत्र 'यौवने विषयैषिणाम्'; रघुवंशी जब युवान होते तब विषय-शब्द, स्पर्श, रूप, रस सबका मर्यादा में सेवन करते। जवानी में दीक्षा ना देनी चाहिए। मौजमस्ती करो पर राम का भजन, हरि का भजन ना भूलें। 'रघुवंश'कार कहते हैं, जवानी में सभी विषयो में मौज करते थे परंतु मर्यादा में रहकर; भारतीय संस्कृति को दाग न लगे इस तरह। इनके कुल में लक्ष्मणरेखा थी और ऐसे कुल में माँ जगदंबा

हो वो कोई रेखा कैसे पार करे? पर रेखा पार करके हमें शिक्षा भी दी कि रेखा पार करो तो किसीका भी अपहरण हो सकता है! मर्यादा जब टूटे तो अनर्थ होते हैं। और हम सब बेमर्यादा में है साहब! इसलिए अनर्थ होते रहते हैं। धन्य रघुवंश, पैर पडूं तुझे! जब वृद्धावस्था आती तब रघुकुल के राजा मुनियों के व्रत पालन करते 'वार्द्धक्ये मुनिवृत्तीनाम्', मुनिव्रतों का पालन करते। अंतिम लक्षण बताया है, 'योगेनान्ते तनुत्यजाम्', शरीर छोड़ने का समय आता तब बीमारी से नहीं मरते, योग की साधना करके मृत्यु को स्वीकारते थे।

इस प्रकार के लक्षण रघुकुल के है। हम ऐसा नहीं कर सकते परंतु जमा किया गया हो उसमें से दसवां भाग निकाल सकते हैं। जीवन के रस का अनुभव करे तब मर्यादाओं का उल्लंघन ना करे। बच्चों को पढ़ाएं। हम यज्ञ तो नहीं कर सकते परंतु भूखे के पेट की आग को रोटी से शांत कर सकते हैं। मंज़िल नहीं मिले तब तक कर्म कर सकते हैं। आलसी, कायर, प्रमादी ना बने। हो सके इतना अतिथि को दें।

तो बाप! रघुवंश के लक्षणों की चर्चा हुई। बीते कल की कथा के प्रवाह में भगवान शिव, सती को जीवन में थोड़ा रस जगे इसलिए रसप्रद कथा सुनाने लगते हैं। उसी समय सती के पिता दक्ष महाराज यज्ञ करते हैं। सभी देवताओं को आमंत्रण दिया परंतु शिव के साथ मनदुःख है इसलिए आमंत्रण नहीं दिया। सती कहती है कि मेरे पिता के घर इतना बड़ा उत्सव है, आपकी आज्ञा हो तो मैं जाउं? शिव ने कहा, हमें निमंत्रण नहीं मिला। तुम जा सकती हो परंतु अपमान होगा। सती ने जिद्द की; मानी नहीं और पिता के घर गई। दक्ष के डर के कारण किसी ने सती का सम्मान नहीं किया पर माँ प्रेम से मिली। सती यज्ञमंडप में गई! वहां शंकर भगवान का स्थापन नहीं हुआ! पहले क्रोध उन ऋषिमुनियों पर आया जो कर्मकांड करा रहे थे। मुझे एक कर्मकांडी देवता ने आज एक पत्र लिखा कि 'बापू, यजमान को कर्मकांड की इतनी सामग्री लिख देता था कि जैसे भूखा रसोईया रसोई का सारा सामान लिख दे! पर कथा जीवन में उतरी, फिर यजमान को सामग्री के बदले श्रद्धा लिखने लगा कि दूसरा कुछ नहीं, श्रद्धा ले के आना। श्रद्धा से उसके देव खुश होते हैं या नहीं उसका पता नहीं पर मेरा मन खुश हो जाता है। बापू, चोटीला की कथा के बाद यज्ञ में हम कर्मकांडियों ने कद्दु काटना भी बंद कर दिया है। बलि तो नहीं परंतु जो फल काटा जा रहा है वो भी गलत है क्योंकि काटने की वृत्ति तो जीवित रहती है! भले ही किसी का सिर काटो या फिर फल। और मैं उस ब्राह्मण देवता के पैर छूता हूं जिसने ये सब कहा।

सती ने कहा, जिसने इस सभा में शंकर की निंदा की और सुनी उन सबको योग्य फिल मिलेगा! हाहाकार हो गया! योगाग्नि प्रज्वलित हुई। पराम्बा सती ने दक्षयज्ञ में अपना देह विलीन किया। दक्ष की दुर्गति हुई। फिर सती ने यज्ञ में जलते समय परमतत्त्व के पास मांगा कि दूसरा जन्म भी मुझे स्त्री का देना और हर जनम में मुझे महादेव ही प्राप्त हो। सती का दूसरा जन्म नगाधिराज हिमालय के यहां पुत्री के रूप में हुआ। दक्षकन्या जलकर राख हुई। बौद्धिकता का नाश हुआ, श्रद्धा जन्म लेती है। पुत्री जन्मी। बहुत बड़ा उत्सव मनाया। बाप! पुत्री जन्मे तो उत्सव मनाना। ऋषिमुनि आने लगे। बड़ी उम्र में जो जीवन में श्रद्धा जन्म ले तो बिना बुलाए साधु हमारे यहां आने लगते हैं। महात्मा आये। हिमालय विशेष समृद्ध हो गया। फिर पुत्री बड़ी होने लगी। ऐसे में एक दिन जो सर्वज्ञ है, त्रिकालज्ञ है, ऐसे नारदजी पधारे। हिमालय अपनी पुत्री से नारदजी का चरणस्पर्श करने को कहते हैं। और नारद से कहते हैं कि मेरी पुत्री का भाग्य कथन करो। फिर नारद भाग्य कथन करते हैं।

धर्मगुरु पूज्य होते हैं, सद्गुरु प्रिय होते हैं

आज की कथा में जो नवदिवसीय कथा का केन्द्र बिंदु है 'मानस-रघुबंस', इसकी एक बार फ़िर सात्त्विक-तात्त्विक परिक्रमा करें इससे पहले गत संध्याकाल यहां पावन रवि-भाण उज्ज्वल परंपरा के अनुसार सत्संग का आयोजन हुआ। उसमें संयोजन-संचालन परमस्नेही श्री नीतिनभाई ने किया। नीतिनभाई ने खूब शालीनता, विवेकपूर्ण जो अनुभव किया होगा उसे प्रस्तुत किया। मुझे बहुत खुशी हुई। अच्छा संचालन था। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। फ़िर पलाणबापा आए। उन्होंने अनुभवपूर्वक निर्भीक चर्चा करी। बापा, 'वार्द्धक्ये मुनिवृत्तीनाम्।' रघुवंश का जो स्वभाव है, जिसे मैं नमन करता हूं। फ़िर पूजनीय सद्गुरु पिताजी के कहने पर जिन्होंने छोटी फूलबाट का दीया प्रगट किया ऐसे पूज्य दलपतसाहब; सुंदर बातें की, आनंद प्राप्त कराया। विवेक के साथ बात करी। आपने कहा कि बोलने से क्या हो, गाने से होता है! और फ़िर अनुभव में स्नान करके निकली वाणी गद्य, पद्य में सुंदर ही गवाती है। मुझे बहुत आनंद आया। आप सब ने उपकार किया। एक बार फ़िर से मैं मन से प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

एक-दो प्रश्न है, वो बाद में लेंगे। पर कल मैं जब यहां से गया तो एक युवक ने गाड़ी में चिठ्ठी रखी थी। चिठ्ठी में लिखा था कि मैं अमरिका में पढ़ता हूं पर हमारी दो पीढ़ी से रवि-भाण संप्रदाय के आश्रित हैं। मुझे पता नहीं, एकाद बार मैं बापा के साथ समाधि पर गया। फ़िर मैं पढ़ने के लिए बाहर आया। पर कभी अडचन आती है तो अमरिका से ही भाणसाहब की समाधि की मान्यता रख लेता हूं। उसने किसी अन्य के साथ ये पत्र भेजा और मुझे पूछा है कि 'बापू, भाणसाहब को आप धर्मगुरु समझते हैं या सद्गुरु?' यहां बैठा हूं। मेरे सभी वचनों मैं कथा में बोलता हूं ये भाणसाहब को मेरे चरण स्पर्श की रीत है। ये कोई वक्तव्य नहीं पर मेरी दृष्टि से जो समझ में आता है वो कि भाणसाहब धर्मगुरु नहीं, सद्गुरु है। भाणसाहब धर्मगुरु नहीं, सद्गुरु है। भाणसाहब धर्मगुरु नहीं, सद्गुरु है। इति त्रिसत्यम्। भाणसाहब ही क्यों? पूरी रवि-भाण परंपरा। भाणसाहब ने धर्म सिद्धांत समझाया? धर्म तो कहे, जाग, जाग, जाग। भाणसाहब कहे, सो जाओ, सो जाओ, सो जाओ। इसमें धर्म की कोई बात नहीं आई। धर्म तो अपने-अपने सिद्धांतों को ले के चलता है।

धर्मगुरु कहेगा, 'रामायण' पढ़ो। धर्मगुरु कहेगा, कर्मकांड की पुस्तक पढ़ो, धर्मशास्त्र पढ़ो, वेद पढ़ो। सब करना चाहिए। धर्मगुरु कहेगा, 'मनुस्मृति' पढ़ो, कुर्रान पढ़ो, बाईबल पढ़ो, धम्मपद पढ़ो, आगम पढ़ो। खूब स्वाध्याय करो। सद्गुरु कहेगा, ग्रंथ के पोटले एक तरफ रखकर अपने अंदर डूबकी मार! ये ग्रंथ भी कितनी गांठ खड़ी करता है! ग्रंथों ने खूब गांठ खड़ी करी है! इसलिए कहा जाता है कि 'ग्रंथ गड़बड़ करी, वात न करी खरी।' धर्मगुरु और सद्गुरु में बहुत फ़र्क है बाप! ओशो कहते हैं कि तुलसीदास धर्मगुरु है, कबीरसाहब सद्गुरु है। ये ओशो का मत है। आकाश को सभी लोग अपनी खिड़की से देखते हैं। जैसी जिसकी खिड़की ऐसा आकाश दिखता है। कबीरसाहब सद्गुरु है, इसमें कोई दो राय नहीं। परंतु तुलसी धर्मगुरु है, ऐसा ओशो का वक्तव्य ये उनकी बात है। ओशो अपनी जगह नमनयोग्य है। हमें इनके सामने किसी विवाद में नहीं ऊतरना है। विवाद का वक्त ही कहां है? उन्होंने उनकी दृष्टि से देखा। मैं मेरी

दृष्टि से कहता हूं। परंतु ओशो आज हो तो मैं पूछुं कि तुलसी धर्मगुरु पर 'रामचरित मानस' क्या है?

सदगुर ग्यान बिराग जोग के।
बिबुध बैद भव भीम रोग के।।

'रामचरित मानस' सद्गुरु है। मेरी दृष्टि से तो एक करोड प्रतिशत तुलसी सद्गुरु है। ये मेरी निष्ठा है। कोई माने या ना माने। मैं किसी से जबरदस्ती नहीं बुलवा सकता क्योंकि मैंने तुलसी को खिड़की में से नहीं, मैदान में खड़े देखा है। और बचपन से उसी की परिक्रमा की है और चारों तरफ से देखा है। तुलसी में जिनको विश्वास है उन्होंने तुलसी को चारों ओर से देखा है। तुलसी केवल धर्मगुरु होते तो इन्होंने जो क्रांतिकारी निवेदन 'मानस' में किये वो हो सकते थे? ये कोई चर्चा का मंच नहीं पर ऐसा कोई शास्त्रार्थ हो तो जीतने के लिए नहीं, विनय से हारने के लिए ऊतरूं जरूर। मेरी दृष्टि से तुलसी सद्गुरु है।

गुरु के अनेक प्रकार है बाप! अमुक कुलगुरु होते हैं; तो अमुक राजगुरु होते हैं। सम्राट भी जिनकी बात मानते, गुरु कहते। तो अमुक धर्मगुरु होते हैं। जैसे साधना ऐसे मुकाम पर पहुंचे सब को ओवरटेइक करके, एक पड़ाव पर पहुंचे तब लोग उसे सद्गुरु कहते हैं। भाणसाहब मेरी दृष्टि से सद्गुरु है। कितनी ही वस्तुएं इन्होंने उल्टी बताई है। रविसाहब ऐसा कहते हैं कि तुम इसका सही उपयोग नहीं करो तो तुम नरक में जाओगे ऐसा नहीं परंतु ये चरखा व्यवस्थित नहीं रहेगा। 'चरखो नहीं रहे सरखो!' 'आ कोणे बनाव्यो अमर चरखो?' कैसे-कैसे रूपक लाये! कितना बड़ा काम किया! सब हमारे आसपास के प्रतीक लिए। तो मेरी दृष्टि से भाणसाहब सद्गुरु है। 'सद्' शब्द मध्यकाल में प्रयुक्त हुआ है क्योंकि उस समय झूठे गुरु भी आये! बाकी उपनिषद तो 'गुरु' शब्द का ही उपयोग करता है। किसी विशेषण की जरूरत ही नहीं। नामदार पोप धर्मगुरु है। जिसस क्राईस्ट सद्गुरु है। ईसू सद्गुरु है। मैंने पूरी कथा की है जेरूसलेम में। हमारे यहां अनेक धर्म है। उनमें जो-जो महापुरुष आये वो धर्मगुरु हो सकते हैं। पर सद्गुरु होते हैं या नहीं ये मुझे पता नहीं। धर्मगुरु पूज्य होते हैं, सद्गुरु प्रिय होते हैं। धर्मगुरु को पूजना ही पड़ता है, नहीं तो लाठी तो उनके पास होती ही है! कब प्रहार कर दे कह नहीं सकते!

बाप! धर्मगुरु सिद्धांत देते हैं; देने भी चाहिए। सद्गुरु सत्य देते है। ये सिद्धांत में मुझे और आपको गड़बड़ करके उल्टा नहीं सीखाता है। सद्गुरु जिसके अग्र भाग में ही 'सद्' है वो ही हमें देता है। तो युवक, आप का प्रश्न मुझे मिला। तो भाणसाहब धर्मगुरु नहीं, सद्गुरु है। और सद्गुरु ही सबकुछ होता है। ये धर्म को समझाते हैं; भ्रम को तोड़कर मर्म का ज्ञान देते हैं। सद्गुरु को सबकुछ आता है, बेटिंग भी, फ़िल्डींग भी, विकेटकीपिंग भी, और एम्पायरिंग भी। ये केप्टन भी बन सकता है तो अंतिम नंबर का खिलाड़ी भी। वह क्षेत्रपाल-रक्षक भी बन सकते हैं। 'ओल ईन वन' बन सकते हैं। हाथी के पैर में अनेक पैर समा जाते हैं। भाणदेव, भाणसाहब धर्मगुरु से भी विशेष है; सद्गुरु है। धर्मगुरु तो कितने ही आते-जाते हैं! कोई पहचानता भी नहीं! और ये समाधि तो अभी भी धूप-अगरबत्ती से महक रही है। अभी भी ज्योत जलती है। अभी भी इसके प्रकाश में मंगल कार्य होते हैं।

आज तो मुझे रघुवंश गाना है 'मानस'के आधार पर। इसीलिए 'मानस' में रघुवंश के कौन-कौन से लक्षण बताये हैं इसकी थोड़ी चर्चा करेंगे। 'मानस' क्या कहता है? हमारा मुख्य प्रसाद, व्यंजन तो यही है। ये तो साथ में चटनी ले ली, गांठिया ले लिया पर मूल तो लड्डु ही ना! प्रेम से प्रसाद लेना। हमारे देश का उपनिषद कहता है, 'अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्।' अन्न अन्न नहीं, ब्रह्म है। हमारी थाली में भोजन परोसा हो तब वो भोजन नहीं, अतिथि को देव समझकर हमारी थाली में ब्रह्म को परोसा है। यह चिंतन जगत के कोई चिंतक में आया ही नहीं! आप जब कथा पूरी हो तब या बीच में से भी जब भी प्रसाद लेना हो ले लेना। इन बावाओं की आदत होती

है कि जितना अधिक प्रसाद लें उतने ही अधिक प्रसन्न होते हैं। अन्नक्षेत्र, तीर्थक्षेत्र से भी बड़ा तीर्थ है साहब! 'रामचरित मानस' में रघुवंश के थोड़े लक्षण जो तुलसी ने लिखे हैं-

रिषय संग रघुबंस मनि करि भोजनु बिश्रामु।
बैठे प्रभु भ्राता सहित दिवसु रहा भरि जामु।।

हम सब उजाले के पुत्र है। कोई एक जाति के लिए नहीं, लेकिन सबके साथ भोजन करूं; मैं सब को खिलाऊं; मैं सब का खाऊं, ऐसी अपनी भावना होनी चाहिए। मैं अकेला ना खाऊं। और साथ में विश्राम; विश्राम का अर्थ ये कि मुझे विश्राम मिला ये सब को मिलना चाहिए। सब को शांति मिले, 'सर्वे भवन्तु सुखीनः सर्वे सन्तु निरामया।' व्यापकता व्यक्ति के रूप में आयी है इसलिए उनके विचार बहुत व्यापक होते हैं। खाली राम ने ऋषि-मुनिओं के साथ भोजन लिया और सो गये, इतना संक्षिप्त अर्थ हो सकता है? सभी को साथ में विश्राम मिले। हमारे देश में, हमारी पृथ्वी पर सभी को विश्राम और शांति मिले। सभी को अच्छा स्वास्थ्य मिले। सब को सुख प्राप्त हो। ऐसे सांकेतिक विचार रघुकुल के होने चाहिए। और है भी। ये पहला लक्षण। स्वभावगत हमारे यहां अवतरित इस विचारधारा को रघुकुल का लक्षण कह सकते हैं, मेरे गुरु की दृष्टि से और मेरी दृष्टि से। दूसरा लक्षण-

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ।
मनु कुपंथ पगु धरइ न काउ।।

रघुकुल तिलक, रघुवंश बनज, रघुवंश भूषण राम है, उनके मुख में से निकले शब्द हैं। पुष्पवाटिका में जानकी गौरीपूजा के लिए आई है। राजकुमारों को देखने के लिए सखी को आगे करके उसके पीछे-पीछे चलती हैं। उनके पैर के नूपुर, कटि करधनी, हाथ के कंगन की आवाज़ होती है। ये सब सुनकर ऐसा लगता है, जैसे भगवान राम के मनरूपी विश्व पर कामदेव विजय प्राप्त करने आया हो। तब प्रभु लक्ष्मण से कहते हैं कि जब मैं सीता के सौंदर्य की चर्चा करूं तो उसका गलत अर्थ मत निकालना। हम रघुवंशी है और रघुवंशीओं का सहज स्वभाव है कि उनका मन कभी भी गलत मार्ग पर नहीं जाता है। ये दूसरा लक्षण। तो रघुवंशी कौन? जिनका मन कभी खराब मार्ग पर नहीं जाये, फ़िर वो भले ही कोई ज्ञाति हो, वर्ण हो, कहीं भी जन्मा हो, वो रघुवंशी है; सूर्यवंशी है। और कुपंथ कौन-कौन से है ये फ़िर 'रामायण' में खोज़ने पड़ेंगे।

मेरे ग्रामीण समाज के भाई-बहनों, हमारे लिए पांच कुपंथ है। बहुत ही सीधी-सादी बात है। एक, हमें जो तीन सौ रूपया मजदूरी मिलती है और फ़िर शाम को देशी थैली मिलती हो उस रास्ते पर अपने कदम चल पड़े तो ये हमारे लिए कुपंथ है। लेकिन इसका अर्थ ये नहीं करना कि हमें इस कुपंथ पर जाना नहीं परंतु कोई अपने घर दे जाय तो पीने में क्या परेशानी? उस मार्ग पर हम नहीं गये, कोई हमारे घर पर थैली दे गया! बाप! रघुवंशी की संतान होने का गौरव लेना हो तो ऐसे मार्ग पर नहीं जाना जहां नशा करके बुद्धि भ्रष्ट हो जाय। घर में आकर मारकूट करें! बालक भूखे सो जाय! ये एक कुपंथ है। रघुवंशी हो तो इस मार्ग पर मत जाना। और हां, मैं कोई आपसे इसे छोड़ देने के लिए संकल्प नहीं कराउंगा, कोई वचन भी नहीं लूंगा। सिर्फ़ एक विचार रखता हूं कि धीरे-धीरे मद्यपान कम कर सकते हैं। धीरे-धीरे इस नशे से बाहर आ सकते हैं। किसी भी व्यसन का अर्थ संस्कृत में दुःख होता है।

दूसरा कुपंथ चोरी। बाप! चोरी का मार्ग कुपंथ है। परिग्रह भी कुपंथ है। अतिशय संग्रह भी कुपंथ है। एक चम्मच पानी हो तो उसमें तरंग नहीं होती हैं। कटोरे में पानी लो तो जरा हलचल होगी। फ़िर परात में इससे ज्यादा हलचल। बड़े भगोने में ज्यादा तरंग हो और दरिया जितना पानी हो तो बड़ी-बड़ी लहर! जैसे-जैसे संग्रह बढ़ेगा लहर बढ़ेगी। तूफ़ान आएगा, आंदोलन बढ़ते हैं। और इसलिए मेरा देश कहता है, 'वणजोतुं नव संघरवुं।' चाहिए उतना ही रखना। बच्चों के लिए व्यवस्था करनी चाहिए। अरिग्रह सुपंथ है, परिग्रह कुपंथ है। और संग्रह नहीं करने में खाली रूपया पैसा की बात नहीं।

मुझे जैन धर्म में एक बार बोलना था। मुझे कहा गया कि अपरिग्रह पर कुछ बोलो। मैंने कहा, मुझे इसमें कुछ पता नहीं चलता है! तो भी कहा कि कुछ बोलो। तो मैंने बोला, पैसा इक्कठा करना ही परिग्रह नहीं, अतिशय विचारों को एकत्रित करना भी परिग्रह है। बहुत विचारों की जरूरत नहीं। सिर्फ़ दो विचार ही रखो, भोजन दो और हरि भजो। वस्तुओं का संग्रह भी परिग्रह है, अपरिग्रह नहीं। गौरव लेना या घमंड करना भी परिग्रह है। मुझे एक बार पूछने में आया कि आप के कितने फोलोअर्स है? मैंने कहा, मेरे फोलोअर्स कोई नहीं, फ्लावर्स है सब। मेरे श्रोता सब फूल है। कोई ये कहे कि मेरे पास इतने लोग है! इससे भौतिक प्रभाव पड़ेगा, भौतिक सफलता भी मिलेगी, परंतु जिस काम के लिए ईश्वर ने हमें धरती पर भेजा है, वो मूल वस्तु रह जायेगी। वाहन चोरी हो जाय तो कोई परेशानी नहीं, मनुष्य का व्यक्तित्व सुरक्षित रहने चाहिए। अति प्रजा परिग्रह है। अति विचारों परिग्रह है। अति वस्तुएं परिग्रह है। अति पैसा परिग्रह है। पैसा बिना कुछ नहीं होता। पैसा ना हो तो ये मंडप भी नहीं बांध सकते! पैसा जरूरी है। परंतु अतिशय संग्रह परिग्रह है, कुपंथ है। चोरी, मद्यपान, जुआ सब कुपंथ है। और सब से बड़ा कुपंथ तो मेरी दृष्टि से ये है कि दूसरों से द्वेष के लिए हम गलत कदम उठा लेते हैं ये कुपंथ है। सूर्यवंशी या रघुवंशी या फ़िर प्रकाश की संतान इतना ध्यान रखना कि हमारा मन कभी कुपंथ पर ना जाये। सावधानी रखे बस। और सावधानी के लिए गुरुपद की जरूरत है। फ़िर से एक बार कहता हूं कि तुलसी दूसरों के लिए धर्मगुरु होगे, मेरे लिए सद्गुरु है। तुलसी ने कब कहा कि मैं धर्मगुरु हूं? उन्होंने तो कहा-

तिन्ह महँ प्रथम रेख जग मोरी।
धींग धरमध्वज धंधक धोरी।।

तुलसी ने कहा, मैं धर्मधुरंधर नहीं, धर्माचार्य भी नहीं, धर्मगुरु भी नहीं। जो होता है वो कभी दावा नहीं करता। सद्गुरु डीग्री नहीं, एक वृत्ति है। एक सद्वृत्ति का नाम सद्गुरु है। ऐसा कोई ग्रंथ तो कोई लाये! वेद आरती उतारते हैं। मैं नहीं कहता, नहीं तो किसी को लगेगा कि गोस्वामीजी की बात करते हैं इसलिए कहते हैं। पर ये तो परंपरा से चला आ रहा है।

गावत बेद पुरान अष्टदस।
छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस।
सार अंस संमत सबही की।।
आरति श्रीरामायनजी की।

तुलसीदासजी रामकथा की शुरूआत में शिवकथा सुनाते हैं। शिव-पार्वती के विवाह की कथा सुनाते हैं। सती दक्ष के यज्ञ में जलकर भस्म हो गई। फ़िर हिमालय के घर जन्मी। नारद ने आके नामकरण किया। हस्तरेखा देखकर भविष्यवाणी की कि ऐसा पति मिलेगा।

धर्मगुरु और सद्गुरु में बहुत फ़र्क है बाप! ओशो कहते हैं कि तुलसीदास धर्मगुरु है, कबीरसाहब सद्गुरु है। ये ओशो का मत है। आकाश को सभी लोग अपनी खिड़की से देखते हैं। जैसी जिसकी खिड़की ऐसा आकाश दिखता है। कबीरसाहब सद्गुरु है, इसमें कोई दो राय नहीं। परंतु तुलसी धर्मगुरु है, ऐसा ओशो का वक्तव्य ये उनकी बात है। उन्होंने उनकी दृष्टि से देखा। मेरी दृष्टि से तो एक करोड प्रतिशत तुलसी सद्गुरु है। ये मेरी निष्ठा है। कोई माने या ना माने। मैंने तुलसी को खिड़की में से नहीं, मैदान में खड़े देखा है। तुलसी केवल धर्मगुरु होते तो इन्होंने जो क्रांतिकारी निवेदन 'मानस' में किये वो हो सकते थे? मेरी दृष्टि से तुलसी सद्गुरु है।

माता-पिता थोड़े दु:खी हुए। परंतु पार्वती समझ गई कि भगवान शंकर की बात कर रहे हैं। प्राण छोड़ते समय जन्म-जन्म में शिवचरण की मांग की थी इसलिए सती प्रसन्न है। नारद ने कहा कि हिमालय तुम्हारी पुत्री तप करेगी तो भगवान शिव मिलेंगे। नारदजी आशीर्वाद देकर चले गये। सुबह पार्वती माता से कहती है कि मैंने सपने में एक गौरवर्ण विप्र को देखा। उन्होंने कहा, उमा, तू तप करने जा। माँ, मैं तप करने जाउं? और फ़िर गोस्वामीजी तप की महिमा गाते हुए थोड़ी पंक्तियां लिखते हैं कि तप से क्या होता है? थोड़ा इसका गान कर लें-

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता।
तपबल बिष्नु सकल जग त्राता।।
तपबल संभु करहिं संघारा।
तबपल सेषु धरइ महिभारा।।
तप अधार सब सृष्टि भवानी।
करहि जाइ तपु अस जियँ जानी।।

तप के बल से ब्रह्मा ने सृष्टि का सृजन किया। और ये तो शास्त्र प्रमाण साथ की बातें है कि ब्राह्मण ने सृष्टि का सृजन करने से पहले बहुत तप किया। तप से सृष्टि का सृजन हुआ है। कोई भी सृजन तप के बिना हो ही नहीं सकता। एक कवि एक कविता का सृजन करता है उससे पहले उसने तप किया होता है। विधाता तप के बल से सृष्टि बनाता है। तप से बनी सृष्टि का परिपालन विष्णु भगवान तप से ही करते हैं। इसी सृष्टि के तप से प्रभावित होकर भगवान शंकर समय आता है तब नवसृजन करने के लिए विसर्जन करते हैं। संहार करना यानी खतम करना नहीं बल्कि नया शृंगार करना। खुद के फण पर शेषनाग पूरी पृथ्वी को धारण किये हुए है। ये तप बिना कुछ संभव नहीं है। अचल रहना ये तपस्या का प्रतीक है। भूमि धारण करना सरल है परंतु गुरु द्वारा दी गई भूमिका को धारण करना बड़ा कठिन है। साधना के बिना ये धारण नहीं हो सकती। टोप पर जाय वही टोपी का अधिकारी है। कबीरदासजी की टोपी टोप पर गई। भाणसाहब की टोपी आकाश को छू गई। टोपी का अर्थ है आख़िरी ऊर्ध्वगमन। सावधान रहना भी तप है। ये इक्कीसवीं सदी का तप है हमको पता हो कि हम सही है फ़िर भी कोई निंदा करे तब हंसते-हंसते बात को मोड़ लेना ये इक्कीसवीं सदी का तप है।

पार्वती के तप की महिमा गाते तुलसी ने कहा है कि 'हे भवानी, पूरी सृष्टि तप के आधार पर टिकी है।' उपनिषदकार भी कहते हैं तप करो, तप करो। अब आप सब तीन घंटे भीड़ में बैठकर कथा सुनते हो ये भी तप है साहब! मैं तुम्हारी प्रशंसा करने के लिए नहीं कह रहा। अभी आप मनस्वी नहीं। मनस्वी होते तो उठके चले गये होते। यशस्वी भी नहीं क्योंकि यहां कोई तुम्हारा स्वागत करने नहीं आता। जहां जगह मिलती है बैठ जाते हो। इसलिए मेरी व्यासपीठ कहती है कि आप सब तपस्वी हो। तप की महिमा गाई।

पार्वती ने खूब तप किया। फ़िर आकाशवाणी हुई, 'हे हिमालयपुत्री! तुम्हारे पिता बुलाये तभी अब घर जाना। तुम्हे शिव मिलेंगे। पार्वती को तप की फलश्रुति मिली। दूसरी तरफ जब से सती ने दक्ष के यज्ञ में देहविलीन किया तब से भगवान शिव का मन विशेष विरागी बन गया। शिव का नेम और शिव का प्रेम देखकर, हृदय में रही अखंड भक्तिरेखा को देखकर भगवान परमात्मा प्रगट होते हैं। शिवजी जागते हैं। हरिहर से भेंट हुई और शिव से कहते हैं कि महादेव, मैं तुम से कुछ मांगने आया हूं। हिमालय जब निमंत्रण दे तब आप पार्वती को स्वीकार करना, उनका पाणिग्रहण करना। अब वो सती नहीं, पार्वती है। 'बाप! आप की आज्ञा शिरोधार्य। ये मेरा परम धर्म है। मैं ब्याह करूंगा।'

भगवान शिव खुद के समाज के साथ महाराज हिमालय के महल के द्वार पर आते हैं। महारानी मैना अपनी सखिओं के साथ दामाद का स्वागत करने आती है। शंकर भगवान नंदी पर बैठे हैं। भूत-प्रेत जैसे लोग साथ में है! ऐसे में आरती उतारने के लिए जाती है और शिव के विकट स्वरूप के दर्शन करके सब बेहोश हो जाते हैं! महारानी मैना नीचे गिर जाती है! सप्तऋषि, देवर्षि नारद और नगाधिराज हिमालय निज मंदिर में आते हैं। नारद कहते हैं, 'आप जिसको पुत्री कह रहे हो वो आप की पुत्री नहीं, पूरे जगत की माता है। आप का भाग्य कि आप के यहां पुत्री के रूप में जन्म लिया। ये तो जगदंबा है और शिव परमात्मा है। आप के घर में शक्ति है, जिसे आप पहचान नहीं पाये। नारद ने परिचय दिया तब शिवतत्त्व समझ में आया; शक्तितत्त्व समझ में आया। इसका आध्यात्मिक अर्थ संतों ने किया कि हमारे अंदर शक्तितत्त्व होते हैं और हमारे दरवाजे पर शिव खड़े होते हैं। पर नारद जैसे सद्गुरु जब तक नहीं समझाय तब तक हमें पता नहीं चलता है।

नारद के वचनों के बाद शिव प्रति सब का नया भाव जागा। शास्त्र में पौराणिक प्रसंग के अनुसार शिवजी मंडप में जाते हैं तब अति सुंदर रूप धारण करते हैं। दिव्य सिंहासन पर महादेव शिव बिराजमान हुए हैं। हिमालय और मैना कन्यादान करने बिराजमान होते हैं। दूसरी तरफ अष्टसखिओं पार्वती को लेके आती है। लोकविधि और वेदविधि दोनों प्रकार से विवाह संपन्न होता है। देवताओं पुष्पवृष्टि करते हैं। शिव-पार्वती का विवाह संपन्न हुआ। थोड़े दिन बारात रुकी। विदाई की घड़ी आई। हिमालय और हिमालय प्रदेश के लोगों की आंखे विदाई की समय भर आई। पुत्री की विदाई के समय खास करके हमारे देश में पिता की जो हालत होती है ये तो बाप ही समझ सकता है। फ़िर उसमें ब्रह्मवादी जनक होय या फ़िर अचलता जिसके स्वभाव में है ऐसा हिमालय हो तो भी क्या? बेटी की विदाई के समय चाहे राजा हो या रंक, सब को एक समान पीड़ा होती है। मेरी पूरे समाज से बिनती है कि जब कोई बेटी आप के यहां बहू बनकर आये तो उसे दूसरे की है ऐसा महसूस नहीं होने देना क्योंकि आप को भी अपनी बेटी को कहीं भेजना होगा। हमारा कवि दादल सभी को रुला गये, जब पहली बार ये पद लोकसाहित्य परिवार में प्रस्तुत किया। नया लिखा हुआ था, 'काळजा केरो कटको।' और जैसे अब तक 'वैष्णवजन तो तेने कहीए' पंक्ति प्रसिद्ध हुई, वैसे ही सभी तक ये गीत पहुंचा-

लूंटाई गयो मारो लाड खजानो, दाद हुं जोतो रह्यो,
जान गई मारी जान लईने हुं तो सूनो मांडवडो,
काळजा केरो कटको मारो हाथथी छूटी ग्यो।

पर्वत की पार्वती ने विदा ली। फ़िर से कालिदास याद आये। 'अभिज्ञान शांकुतल' में जब कण्वऋषि पालितकन्या शकुंतला को जब विदा देते हैं तब तपस्वी एक ऋषि की आंखों में से आंसू निकल आते हैं। सखी, मृग, आदि; जब शकुंतला पतिगृह जाती है तो रोते हैं इतना ही नहीं, जिन पौधों को पानी पिलाया था वो पौधें भी कहते हैं कि ना जाओ, ना जाओ! कण्व नरम पड़ जाते हैं। तो अचल हिमालय भी बेटी की विदा के समय हिल जाते हैं। ये ममता का संबंध है।

शिव कैलास पहुंचते हैं। समय बीतने लगा है। पार्वती कुमार को जन्म देती है। पूरे जगत को पता चला। प्रतापी और पुरुषार्थी पुत्र कार्तिकेय जन्मा। षड्मुखी है। मुझे गुरुकृपा से ऐसा समझ में आया कि पुरुषार्थ के छः मुख होने चाहिए, तो ही पुरुषार्थ सफल होता है। ऐसे पुरुषार्थ का प्रतीक कार्तिकेय है। इसने ताड़कासुर का नाश किया। देवताओं को सुख मिलता है। इस तरह याज्ञवल्क्य शिवचरित्र पूरा करते हैं। अब याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी से कहते हैं, भगवान शंकर एक बार सदाबहार वेदविदित वटवृक्ष कैलास का, उसकी छाया में खुद के हाथों से मृगचर्म बिछाकर सहज आसन पर बिराजमान होते हैं। पार्वती अवसर देखकर आती है और रामतत्त्व की जिज्ञासा प्रकट करती है। उसके जवाब में शिव 'रामचरित मानस' का गायन शुरू करते हैं।

कथा-दर्शन

- सद्गुरु का-बुद्धपुरुष का अपना एक आभामंडल होता है।
- सद्गुरु यह डिग्री नहीं, वृत्ति है। एक सद्वृत्ति का नाम है सद्गुरु।
- सद्गुरु कई प्रकार के मोह-ममता के अंधेरे को हटाते हैं।
- धर्मगुरु अभिप्राय देते हैं, सद्गुरु अनुभव देते हैं।
- धर्मगुरु पूज्य होते हैं, सद्गुरु प्रिय होते हैं।
- गुरु मिल जाय फिर परमात्मा भी हमारा लक्ष्य नहीं होना चाहिए।
- साधु की पहचान स्वभाव से होती है, प्रभाव से नहीं।
- साधु की गद्दी जैसी स्वस्थ गद्दी दुनिया में किसी की नहीं होती।
- भयमुक्त और प्रलोभनमुक्त कोई भी नाम लें यह हरिनाम है।
- भजन को जितना गुप्त रखोगे इतना ज्यादा पकेगा ; उसका प्रचार नहीं होना चाहिए।
- भजन के भोग पर रजोगुणी और प्रतिष्ठा पाने के लिए होती प्रवृत्ति कभी-कभी आग का कारण बनती है।
- आश्रय एक बार ही होता है और एक का ही होता है।
- प्रणाम सबको करना, सबको दिल से आदर देना, लेकिन दृढ़ाश्रय को व्यभिचारी मत करना।
- शरणागति के बिना साधन संपादन हो सकता है, सुख संपादन नहीं हो सकता।
- भगवान को भी भक्तविरह का अनुभव होता है।
- विश्व हमें दे यह विशेष सम्मान नहीं है, विश्वंभर दे यह विशेष सम्मान है।
- अन्नक्षेत्र ये तीर्थक्षेत्र से भी बहुत बड़ा तीर्थ है।
- सावधान रहना यह इक्कीसवीं सदी का तप है।
- हमारी वृत्ति हमारे वेश से प्रकट हो जाती है।
- आकाश को सभी अपने वातायन से देखते हैं। जिसका जैसा वातायन, वैसा आकाश दिखाई देता है।
- मानव विचारक होना चाहिए, उद्धारक होना चाहिए और स्वीकारक होना चाहिए।

अंधाधुंध अस्तित्व को कंट्रोल करने का काम बुद्धपुरुष करते हैं

'मानस-रघुबंस', रघुवंश की थोड़ी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम बातचीत के संवादी सूर में कर रहे हैं। आज पूज्य भाणसाहब की जन्मजयंती की विशेष प्रसन्नता है। मुझे सुबह पूज्य जानकीदासबापू कहते थे। कल रामजन्म की कथा प्रवाह तक पहुंच नहीं पाया। बापू ने कहा, यह कुदरती संकेत है कि आज भाणसाहब की जयंती है और कथा में राम का जन्म भी होगा। जिसे हम अवतार कहते हैं, जो वचन दे चुके हैं कि हम युग दर युग जन्म लेंगे, 'संभवामि युगे युगे।' परमतत्त्व जो अवतरित होते हैं तब उनके साथ चार वस्तु आती है। उसी क्रम में परमतत्त्व का भजन करनेवाला विशेष संतपुरुष जन्म लेता है तब उसके साथ भी चार वस्तु आती है। कभी-कभी बुद्धपुरुष समाज का अधिकार सिद्ध नहीं होता अथवा तो आश्रितों की कक्षा निर्मित नहीं होती तब तक अपने रहस्य नहीं खोलते। कालांतर किसीको खोलने पडते हैं। संकेत यह है बुद्धपुरुष का कि मेरे पास आनेवाला वर्ग इतना तैयार नहीं था। सो मैंने पर्दा रखा था। अब मेरे बाद तू है। यह परमेश्वरी सत्ता हो कि किसी सद्पुरुष की पावन परंपरा या तो गद्दी परंपरा हो। गद्दी काफ़ी काम करती है। हम आलोचना न करे। सम्यक् समझ हो तो राजगद्दी भी काफ़ी काम कर सकती है। पर कहा जाता है कि राजगद्दी हंमेशा अस्वस्थ होती है। साधु की गद्दी जैसी स्वस्थ गद्दी दुनिया में किसी की नहीं होती। यह साधुओं की कोरी प्रशंसा नहीं हैं। हां, उसे विशुद्ध रखने की हमारी जिम्मेदारी होती है।

जहां प्रागट्य ज्योत परंपरा नहीं है ऐसे स्थानों में हम देख न सके ऐसी आग लगी हुई होती है। चंदन काष्ट भी जब ज्यादा घिसता है तब आग लगती है। चाहे उसका जन्मजात स्वभाव शीतल हो। पर आग पैदा होती है। ज्यादा संग्रह संघर्ष पैदा करता है। भजन के भोग पर होती रजोगुणी और प्रतिष्ठा पाने की सेवा प्रवृत्ति कभी आग का कारण बनती है। तलगाजरडा मानता है, भजन का कोई विकल्प नहीं है। सेवा करनी चाहिए। क्या ये सभी स्थान सेवा नहीं करते? यह जानकीदास बापू क्यों लगे रहते हैं? बापू, मैं आपके लिए कुछ कहूंगा नहीं पर आपकी व्यवस्था पसंद आई। यह तो भाण का मेला हैं। यह तो रवि-भाण का छोटा कुंभ है। हमें पता नहीं पर पूरी परंपरा सचेतन फैरे लगाती होगी। परिकम्मा करती होगी। मैं बिनती करूं कि इस स्थान को एक जाति तक सीमित मत रखियेगा। पूरे जगत के लिए भाण उगा है। केवल लोहाणा के लिए या जिन्होंने कंठी बांधी हो केवल उनके लिए नहीं है। रवि सबका है। भाण सबका है। जीवण हम सबका है। खीम, त्रिकम, जलाराम सबका है। इन्हें क्यों सीमति रखें? कभी-कभी आश्रित ही महानतम संत को सीमित कर देते हैं।

इस कथा में कई लोग कहते हैं कि भाणसाहब के बारे में पता ही नहीं था! यह किस तत्त्व की चर्चा हो रही है? सूर्य सबका होता है। यह कितनी बड़ी विशाल विचारधारा है? ऐसे विचार भी कालांतर रूप समाधिपुरुष ही देते हैं। हमें तो आज्ञा ही माननी हैं। हमारें सेंजल में ध्यानस्वामीबापा की समाधि। राधाकृष्ण हम निम्बार्कीयों के इष्टदेव है। बैसाख में पाटोत्सव होता। भयानक गर्मी! सब दु:खी-दु:खी हो जाय! मेरा समाज मेरी सुन लेता है। मैंने कहा, बापू के पाटोत्सव की तिथि को बदल डालें? हमारे बापू भी न चाहे कि इस गर्मी में हम त्रस्त हो जाय। अत: हमें महा सुद में कर डाली। यह समाधि का ही संकेत होता है। शायद हम माध्यम होते हैं।

विश्व में गोड पार्टिकल-सूक्ष्माति सूक्ष्म की खोज के बाद विज्ञान अभी भो खोज करता है। मैं आज के अखबार में देख रहा था। एक लघु ग्रह पृथ्वी के बाजू से निकलनेवाला है। कहां उतरेगा पता नहीं। सूझ न पड़े तो समझना कोई गुरु उतरा। वह लघु कहा जाय पर होता है रघु। गुरुकृपा से मैं ऐसा समझा हूं। विज्ञान ने सिद्ध किया है कि सब किसीके काबू में नहीं है। ज्यों सब अणु का मनचाहा उपयोग करते हैं। तुलसी ने इसे अंधाधूंध सरकार बताई। गुरुकृपा से मेरी व्यासपीठ ने कभी कहा कि परम अव्यवस्था का नाम परमात्मा है। यहां तो व्यवस्था होनी चाहिए। हम सब धरती पर है। हम जिसे 'परम' कहते हैं इससे बड़ा कोई शब्द नहीं। साहब, पता ही नहीं चलता! यह सब कौन कर रहा है? परम अव्यवस्था जो परमात्मा है उसे कौन कंट्रोल करता है? पांच वस्तु है। किसीके लिए नखशिख शुद्ध साधु की ज्योत कंट्रोल करे। जिस दिन बंद पड़ जाय, हमारी चेतना में छिद्र पड़ जाता है। गद्दी बहुत काम करती है। एक ज्योति अव्यवस्थित को कंट्रोल करती है।

दूसरा, यह सब किसीके काबू में नहीं है। कौन काबू में ले? दूसरा तत्त्व, बुद्धपुरुष की एक नजर, हम दृष्टि कहते हैं। कौन-सी दृष्टि? 'तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन।' इसमें मेरी पूरी श्रद्धा है; गुणातीत श्रद्धा है। किसीकी दृष्टि कंट्रोल करती है। यह किसी बुद्धपुरुष की ज्योत कंट्रोल करती है। मेरी गुणातीत श्रद्धा मुझे कहने के लिए प्रेरित करती है, मानने के लिए प्रेरित करती है। यह अंधाधूंध अस्तित्व है इसे बुद्धपुरुष की दृष्टि कंट्रोल करती है। गोरखनाथ हिमालय की घाटियों में है और आगंतुक सेवक कहीं गए हैं। गोरख को समर्पित है। परंतु जल-वायु में कांप उठे है! गोरख को करुणा हो आती है। कहते हैं, गोरख ने चारों ओर आंख घुमाई और उन्हें जितना तापमान चाहिए उतना कर डाला! सख्त गर्मी में ऐ.सी. यंत्र तापमान को कंट्रोल करता है। तो क्या मंत्र तापमान कंट्रोल न कर सके? यंत्र से तापमान कंट्रोल हो तो क्या बुद्धपुरुष की नजर खलक के तापमान को कंट्रोल न कर सके? नजर का बड़ा महत्त्व है। रजोगुणीओं ने त्राटक की नजर की इसमें मेरी श्रद्धा नहीं है। नजर माने करुणा से भरी नजर।

नज़र ने नज़र से मुलाकात कर ली।
रहे दोनों खामोश और बात कर ली।

●

मैं तुझे देखुं तू मुझे देख।
देखते-देखते हो जाए एक।

शंकराचार्य इसे अद्वैत कहते हैं। नजर बेकाबू है। शुद्ध-प्रबुद्ध साधु की ज्योति सबको कंट्रोल करती है। बुद्धपुरुष की आंख भी करती है। तीसरा, कबीर जैसे फटे पियाला का एक वचन सब कंट्रोल करे।

वचनविवेकी जे नरनारी पानबाई!
ब्रह्मादिक लागे ऐने पाय...

परंपरा में वचन की बहुत महिमा है। वचन भी कंट्रोल करता है। चौथा, राममंत्र कंट्रोल करता है। राममंत्र को मैं संकीर्ण नहीं समझता। जो मंत्र आपके पास है वह कंट्रोल करता है। जगत को कोई भी मंत्र कंट्रोल करेगा। जो मंत्र हो; कोई भेद नहीं। 'अल्लाह' 'अल्लाह' करो या 'ॐ नम: शिवाय, ॐ नम: शिवाय' आंख में आसूं के साथ बोलिए तो कभी अनुभव होगा आप कैलास की परिकम्मा कर रहे हैं! कोई भी मंत्र बोलिए। वह रहेमान है, वह हनुमान है। हम पर रहम करते हैं। दीवारें मत निर्मित करो। यदि करे तो दरवाजे बड़े रखिए। कई संप्रदाय ऐसे हैं। मैं कोई धर्म-संप्रदाय की बात नहीं करूंगा। आप अपनी दृष्टि से देखियेगा। रास्ते पर ऐसे कई स्थान आयेंगे। आप देखिए, संगेमरमर के सुंदर मंदिर होंगे पर मंदिर के साईज अनुसार दरवाजे नहीं होते! दरवाजे छोटे होते हैं! दूसरों को अंदर जाने न दे और अंदर जो हैं उसे बाहर न आने दे! किस शिल्पी ने ऐसी डिजाइन तैयार की होगी? विशाल मंदिर के चौड़े दरवाजे रखिए ना! वास्तुशास्त्र कारण होगा? राम जाने? लेकिन मेरा विचारशास्त्र ऐसा कहता है। सुंदर

मंदिर है पर पताका की साईज चौडी नहीं होती! चिंथड़े फहराते हैं! लम्बी है पर चौडी नहीं!

आप घर कैसा बनाते है इस पर से आपकी मानसिकता का पता चलता है। छबि कैसी रखते हैं इससे भी पता चलता है। अस्सी वर्ष की उम्र हो और उसके अनुरूप वस्त्र न हो तो भी मानसिकता का पता चल जाता है। अठारह की उम्र हो और उनके अनुरूप पोशाक हो तो भी पता चल जाता है। वेश पर से मनोवृत्ति का पता चल जाता है। मेरा राममंत्र है जो सबका है। यदि भाणसाहब सबके है तो क्या रामसाहब नहीं हो सकते? वह केवल हिन्दु के ही हो? वह मुस्लिम के नहीं? कोई दरवाजा ही बंद रखे तो रवि क्या करे? रवि तो घर के अंदर आना चाहता हैं। रवि ने दस्तक दी थी पर आपने तो दरवाजा एकदम पेक कर दिया था! ज्योत, वचन, दृष्टि, मंत्र। पांचवां बुद्धपुरुष का चरण। मेरी गुणातीत श्रद्धा प्रेरित करती हैं कि ये पंचतत्त्व अंधाधूंध सरकार को कंट्रोल करते हैं।

जब महान अवतरण होता है तब चार वस्तु प्रगट होती है। महाराज दशरथ पुत्रवंचित है अत: ग्लानिमय है। इतनी रानियां होने के बावजूद भी पुत्र नहीं है। गुरुद्वार जाते हैं। भाणसाहब के अवतरण के साथ भी चार वस्तु प्रगट हुई है।

धरहु धीर होइहहिं सुत चारी।
त्रिभुवन विदित भगत भय हारी।।

जब भी ईश्वर, परमात्मा, बुद्धचेतना हमारे बीच आती है तब धरती पर उनके साथ धैर्य का अवतरण होता है। शिवसूत्र में लिखा है, 'धैर्यकंथा।' हे साधु, तेरी गुदडी धीरज है। तो जब महान अवतरण होता है उसके साथ धीरज अवतरित होती है। उसके साथ धैर्य के दीपक प्रगटते हैं। वशिष्ठ कहते हैं, 'राजा धैर्य धारण कीजिए। 'होइहहि सुत चारी', यह गुरुदृष्टि है। इस जगत को संतुलित करने के लिए उस समय चार की जरूरत थी। किसीके मौन की जरूरत थी। किसीको मुखर होने की आवश्यकता थी। प्रेम की जरूरत थी। निर्वाणरूप राम की जरूरत थी। यह वशिष्ठजी का दृष्टिकोण था। जो मेरी विचारधारा है उसीसे यह प्रगट होगा तो ये जगत को कंट्रोल करेंगे; ये जगत का जतन करेंगे। चार पुत्रों का जन्म होगा। और 'त्रिभुवन बिदित', बिना ऐश्वर्य के त्रिभुवन में कैसे प्रसिद्ध हो सकते हैं? भाणसाहब का प्रागट्य हो और जो उन्हें समझ सके उसके अंदर के त्रिभुवन को ऐश्वर्य से भर दे। भजन, साधना, बोध का यह ऐश्वर्य आलोक खड़ा कर देता हैं। 'त्रिभुवन बिदित' का अर्थ ऐश्वर्य है। 'भगत भय हारी', आपके यहां जन्मे पुत्र भक्तों के भय को दूर करेंगे। आपके घर शौर्य का प्रागट्य होगा। प्रथम धैर्य का प्रागट्य होगा। फिर दृष्टि की करुणा के चार रूप आयेंगे। फिर ऐश्वर्य का प्रागट्य होगा। और फिर शौर्य। भयभीत को मुक्त करने शौर्य चाहिए। भाणसाहब ने अंधश्रद्धा से भयभीत समाज को अपने शौर्य से मुक्त किया होगा। अनावश्यक चीजें हटाई होगी। तलगाजरडा मानता है किसी परम के अवतरण से चार वस्तु का प्रागट्य होगा। भगवान की कथा सुनने से धैर्य मिलता है। आधार मिलने से शौर्य प्राप्त होता है। भीतरी ऐश्वर्य का अनुभव होता है। महान संत चेतना के प्रागट्य से हमें धैर्य मिलता है। गुरु हमें भीतरी प्रकाश से भर देगा। तीसरा, दृष्टि जीवन के एक-एक कोने में उजाला भर देगा। चौथा, भय से मुक्त करेगा। ये चार लक्षण किसी अवतरण के साथ प्रगट होते हैं।

आज भाणसाहब का जन्मदिन है। सुबह समाधि को प्रणाम कर आया हूं। दोनों जयंती का आज योग है। एक भूमिका बन गई। अब रामजन्म की ओर जाय। भगवान शंकर सहजासन में बैठे हैं। योग्य अवसर है। पार्वती आती है। पार्वती ने महादेव से प्रश्न किया है कि 'हे प्रभु, अभी तक मेरे मन से यह भ्रमणा नहीं गई है कि रामतत्त्व क्या है? रामकथा द्वारा रामतत्त्व समझाईए।' पार्वती की जिज्ञासा पर शंकर प्रसन्न हुए। शिवजी ने जब कैलास पर बोलना शुरू किया तब पहला वक्तव्य था कि

धन्य, धन्य देवी आपके समान जगत में उपकारी नहीं है। कथा में निमित्त बने उसे तुलसी ने उपकारी कहा है। समाज याद रखे कि संत परम हितकारी होते ही हैं। जानकीदास बापू संत परंपरा में बैठे हैं। उनके उपकार-परमार्थ में जिसने वित्तजा, तनुजा, मानसी सेवा में निमित्त बने हैं उन्हें भी तुलसी धन्यवाद देते हैं। शिवजी कहते हैं, हे देवी, जो बिना पांव के चले वह राम है। बिना हाथ के संचालन करे वह राम है। बिना कान के सुने वह राम है। बिना शरीर के सबको स्पर्श करे वह राम है। बिना नेत्र देखे वह राम है। घ्राणेन्द्रिय बिना भी सुगंध ग्रहे वह राम है। ऐसी जिनकी अलौकिक करनी है। जिनकी महिमा वेद भी नहीं गा सकते, जिनका ध्यान मुनि करते हैं वही तत्त्व दशरथ के आंगन में अवतार लेकर पधारते हैं।

परमतत्त्व कार्य-कारण के सिद्धांत से पर है। पर कुछ निमित्त कहने पड़ते हैं। पहला कारण, जय-विजय को सनतकुमार का शाप मिला जो विष्णु के वैकुंठ के द्वारपाल है। उसका पतन हुआ। वे असुर बने। उनके लिए भगवान राम को अवतार लेना पड़ा। दूसरा कारण, सतीवृंदा उनका पति जलंधर। विष्णु भगवान ने छल किया विश्व कल्याण हेतु। फलत: जलंधर की पत्नी जान गई। उसने शाप दिया कि आपको राम का अवतार लेना पड़ेगा। मेरा पति रावण बनकर आयेगा। आपकी पत्नी का अपहरण करेगा। तब यह हिसाब चुकते होगा। इसीलिए हरि को अवतार लेना पड़ा। तीसरा कारण, देवर्षि नारद ने भगवान विष्णु को शाप दिया, भगवान विष्णु को नारायण में से नर बनना होगा। चौथा कारण, मनु और शतरूपा का है। नैमिषारण्य में जाकर इस दंपती ने बारह अक्षर का मंत्र लेकर हरि की आराधना की। परमात्मा ने प्रगट होकर वचन दिया तब मनु ने माना कि दूसरा जन्म हमारे यहां पुत्ररूप में हो। पांचवां कारण, प्रतापभानु राजा, सत्यकेतु का पुत्र कपटमुनि के संग में आ जाता है। कपटमुनि उसे फंसाते है। फलत: ब्राह्मणों के शाप का भोग बनते हैं। प्रतापभानु दूसरे जन्म में रावण बनता हैं। उसका भाई अरिमर्दन कुंभकर्ण बनता है। मंत्री धर्मरुचि दूसरी माता की कोख से विभीषण रूप में जन्मा। यों तुलसी की कथा में राम के प्रागट्य पूर्व रावण, कुंभकर्ण, विभीषण की कथा रखी है। व्यासपीठ देखती रही कि सूरज उगे इससे पूर्व अंधेरा होता है। अत: निशिचर वंश का पहले और सूर्यवंश का वर्णन बाद में है।

रावण, विभीषण और कुंभकर्ण बहुत तप करते हैं। दुर्लभ वरदान की प्राप्ति करते हैं। फिर रावण पूरे जगत को त्रस्त करता है। धरती कांप उठी। धरती ने गाय का रूप धारण किया। रोती-रोती ऋषिमुनियों के पास गई, 'हे महात्माओं, मुझे बचाईए।' उस युग में भी गाय तकलीफ़ में थी; आज भी है। मानो वे कहती हैं, अब भार लगता है। आप मेरी रक्षा कीजिए। समाज के लोग, ऋषि-मुनि, साधु-संत, संपन्न लोग सबको गाय की चीख सुननी चाहिए। अभी मेरे देश की गाय रोती है, पुकारती

कई संप्रदाय ऐसे हैं; यों मैं किसी संप्रदाय या धर्म की बात नहीं करता। लेकिन आप अपनी दृष्टि से देखियेगा। आप रोड पर निकले तो ऐसे कई स्थान आयेंगे। ऐसे-ऐसे सुंदर मंदिर हो पर उसकी साइज़ के दरवाजे नहीं होते! दरवाजे एकदम संकीर्ण होते हैं! दूसरों को घुसने न दे! या जो अंदर है उसको बाहर न आने दे! ऐसे विशाल मंदिर के दरवाजे लंबे-चौड़े रखिए। वास्तुशास्त्र होगा, राम जाने! पर मेरा विचारशास्त्र ऐसा कहता है। सुंदर मंदिर हो लेकिन पताका चौड़ी नहीं? चिंथड़े उड़ते हो मानो! लंबी है पर चौड़ी नहीं! आप घर कैसा बनाते हैं इस पर से आपकी मानसिकता पहचानी जाती है। आप कैसी छबियां रखते हो इस पर से आपकी मानसिकता का परिचय मिलता है।

है। ग्रामीण लोग तो गाय रखते हैं। जो गाय को नहीं पालते वे पाले। माँ-बाप को नहीं पालते; वृद्धाश्रम भेजते हैं! गाय के लिए वृद्धाश्रम कीजिए ना! गौसदन बनाईए। घर में बांधने की जगह न हो तो थोड़ी आय निकाल गाय को दत्तक लीजिए ना! पुनः कहता हूं, गाय को पूज्य माने साथ में प्रेम भी कीजिए। जो गाय को प्रेम करेगा, वो काटने नहीं देगा। गाय का जतन कीजिए। आप पांच आदमियों तक बात पहुंचाईए। मेसेज जाय कि गाय दुःखी है। 'गाय कमाउ नहीं है। पूरी वसूलात नहीं होती।' ये सभी दलीलें गलत है। हम क्या गाय को पालेंगे? गाय पूरे परिवार को पालती है। ऐसे सुंदर प्रयोग हमारे पास आए हैं। हमारी मूल नस्ल खत्म न हो इस तरह नये-नये उपयोगी प्रयोगों का स्वीकार होना चाहिए। बिना मूल टूटे गायों का जतन होना चाहिए। मुझे आनंद है कि कहीं न कहीं साधु यह कार्य कर रहा हैं। पूरा समाज करता है। सरकार भी इस पर न केवल विचार करे पर सजाग हो जाय; दौड़ पडे। इतना ही नहीं, लक्ष्य तक देश को पहुंचाये। योजनाएं बनती है। अटक पड़ती है! अनुकूलता न हो तो हम इतना तो करे कि गाय के दूध का उपयोग करे। इससे फायदा होगा।

गोस्वामी वर्णन करते हैं। ऋषिमुनियों ने कहा कि रावण के जुल्म से हमारा चिंतन-मनन अटक गया है। देवताओं ने कहा, हम भी पुण्यशील है। पर पुण्य पूरे हो गए हैं! हम सब ब्रह्मा से शिकायत करें। वहां जाकर सब ने सामूहिक प्रार्थना की। आकाशवाणी ने धैर्य धरने का आश्वासन दिया, डरिए मत। समग्र अस्तित्व एक व्यक्ति के रूप में प्रगट होगा। वह कुल गौब्राह्मण प्रतिपाल का पद पूरा करेगा। देवताओं के अंश बंदर रूप में परमात्मा की प्रतीक्षा करने लगे हैं। मानव को पहले पुरुषार्थ करना चाहिए। पर इसकी भी सीमा है। पुकार के बाद प्रतीक्षा करनी चाहिए। मुझसे बन सका उतना मैंने कर लिया। अब मैं राह देखूंगा। कृष्ण दवे कहते हैं-

आवशे, ए आवशे, ए आवशे, ए आवशे.
तुं प्रतीक्षामां अगर शबरीपणुं जो लावशे.

तीसरी पायदान है अध्यात्म में प्रतीक्षा। प्रथम पुरुषार्थ, फिर पुकार। अपनी भाषा में मेलडी माँ ये मेलडी माँ! मार डाक, एक-दो दांडी मार जल्दी! खबरदार, बेहोश हो! अंटशंट नहीं करना है! मेरी व्यासपीठ का प्रयत्न रहा है कि अपने पुराने वाद्यों है उसकी अनुरूप मात्रा में प्रतिष्ठित हो। रावणहत्था बजना चाहिए। खाली रेलवे के डिब्बे में बजता था वह भी निकल गया! कितनी कलाएं लेकर रेलवे के डिब्बे में आते थे! ये सब स्टेज पर आना चाहिए। पुकार करो; मेलडी तो मेलडी, महादेव हो तो महादेव आपकी गुणातीत श्रद्धा होनी चाहिए। अपने पास जो है वह बजाए। श्रद्धा से गाईए। जरूरी नहीं कि आपके पास वैदिक मंत्र है। माँ, माँ, माँ करिए। पहले पुरुषार्थ फिर पुकार। फिर अंतिम पायदान टूटती है। हम काफी पुरुषार्थ करते हैं। प्रार्थना भी बहुत करते है। पर राह नहीं देखते कि इतने 'हनुमानचालीसा' करने के बाद भी हनुमान नहीं दिखाई दिए! इतने गायत्री अनुष्ठान करने के बाद भी माताजी के दर्शन नहीं हुए! तीसरी पायदान प्रतीक्षा है। परिणाम प्रतीक्षा के बाद है। तुलसी हमें अयोध्या ले जाते हैं।

सूर्यवंश, इक्ष्वाकुकुल, पावनी परंपरा और उसमें दिलीप, रघु, अज और महाराजा दशरथ। कैसे है दशरथजी? धर्मधुरंधर; धर्म को अपने कंधे पर उठाया है। धर्म केवल पताका में नहीं सिमटना चाहिए। कंधे पर होना चाहिए। गुणनिधि; सभी गुणों के भंडार थे। ज्ञानी थे। केवल ज्ञानी और कर्मठ ही नहीं, हृदय में सारंगपाणिनी भक्ति है। वेदों के तीनों कांड लेकर रघुकुल में जन्मे महाराज दशरथजी जिनमें ज्ञान, उपासना, कर्म तीनों का विग्रह है। कौशल्यादि प्रिय रानियां हैं। परस्पर में प्रगाढ़ प्रेम है। सब साथ मिलकर परमतत्त्व की भक्ति करते हैं। तीन सूत्र दिव्य गृहस्थजीवन के लिए। तीन मुद्दे की फार्म्यूला है। पति अपनी पत्नी को प्रेम करे। पत्नी पति

का आदर करे, सन्मान दे। दोनों अपने कुल की परंपरा के इष्ट के भजन करे, हरि को भजे। ऐसे घर में राम जैसा पुत्र जन्म लेगा। बस, इतना करना है, पर नहीं होता!

दशरथजी को लगा, इतनी रानियां, समृद्धि, वेद में प्रसिद्धि पर मुझे पुत्र नहीं है! कल अयोध्या का कोई वारिस नहीं होगा! इसकी ग्लानि शुरू हो गई है। यह पीड़ा मैं किसे कहूं? मैं बार-बार बरसों से कहता हूं, जब कोई ठिकाना न मिले तब अपने गुरु के द्वार जाना। दशरथ गुरुद्वार गए। आज राजद्वार गुरुद्वार जाता है। चरण में वंदन कर सुख-दुःख के समिध समर्पित करते हैं। 'भगवन्, एक बार आपके मुख से सुनना है कि रघुवंश मुझसे आगे बढ़ेगा या समाप्त हो जाएगा?' गुरु कृपालु ने कहा, 'राजन्, थोडी धीरज धारण करे। चार पुत्र होंगे। पर एक यज्ञ कराना होगा। पुत्र कामयज्ञ का आरंभ हुआ है। अंतिम आहुति भक्ति सहित जब दी गई तब उस समय यज्ञकुंड से यज्ञपुरुष प्रगट हुए। हाथ में स्वर्णकलश है। उसमें यज्ञचरु है। सब गुरु ही करते हैं। एक बार गुरु को शिश सौंपा फिर सारी जिम्मेदारी गुरु की है। शृंगी बुलाए गए। गुरु ने यज्ञ कराया। गुरु के हाथ में प्रसाद का चरु आया। उन्होंने दशरथजी को दिया, कहा, सब रानियों में बांट दीजिए। सब में गुरु केन्द्र में रहते हैं। वशिष्ठजी के हाथ में प्रसाद का चरु है। दशरथजी को सौंपा। प्रसाद बांट दिया।

समय बीतने लगा। पूरे विश्व में मंगल शगुन होने लगे। योग, लगन, वार, तिथि, ग्रह पंचाग के पांचों अंग अनुकूल हुए। चराचर हर्ष में डूबा है। प्रभु प्रागट्य की बेला आई। मंद, सुगंध, शीतल पवन बहने लगा। त्रेतायुग, चैतमाह, नौमी तिथि और मध्याह्न का भास्कर। अभिजित नक्षत्र। समग्र अस्तित्व धन्य बना है। मंगल भवन प्रागट्य बेला मंगल वातावरण हुआ। पूरे जगत में जिनका निवास है ऐसा ब्रह्मतत्त्व, परमतत्त्व, भगवान तत्त्व, ईश्वरतत्त्व माँ कौशल्या के महल में प्रगट है। चतुर्भुज विग्रह है। माँ कौशल्या ने दर्शन किया है। 'भए प्रगट कृपाला...' 'दीनदयाला कौशल्या हितकारी।' पर कौशल्या को केवल कौशल्या तक सीमित रहे यह पसंद नहीं है। समस्त ब्रह्मांड के हितकारी होने चाहिए। ईश्वरत्व भले मेरे घर में जन्मे पर उसका लाभ पूरे जगत को मिलना चाहिए। रूपये भले मेरे पास हो पर पूरे जगत में बंटना चाहिए। मेरा परमधन जो राम है वह विस्तृत होना चाहिए। कहा, आप रूप बदल डालिए। संतों से सुना है कि माँ ने मुंह फेर लिया। परमात्मा विशिष्ट विग्रह लेकर आए और कहा, 'माँ, मैं आया और तुमने मुंह फेर लिया?' कहा, 'आपका स्वागत है। पर आप वचन चुक गए हैं। गत जन्म में आपने कहा था कि मैं आपके घर मनुष्यरूप में आउंगा। आज आप नारायणरूप आए हैं।' मुझे इस प्रसंग में बहुत आनंद आता है। मेरे देश की माँ ईश्वर को मनुष्य बनने का पाठ सिखाती है। ब्रह्म को बालक बनाने की पाठशाला केवल हिन्दुस्तान में हैं। भगवान बालक रूप में कौशल्या की गोद में रोने लगे हैं-

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

बिप्र, धेनु, सुर और संत के लिए उनके कल्याण हेतु हरि जन्मे थे। मनुष्य का रूप लिया। माँ की गोद में रोने लगे। रानियों ने रोने की आवाज़ सुनी, भ्रम के साथ दौड़ आई। आया ब्रह्म और सब को भ्रम हुआ! बिना सद्गुरु भ्रम और ब्रह्म की समस्या का निवारण कौन करे? सभी रानियां आ गई। दशरथजी को बताया गया कि आपके यहां पुत्रजन्म हुआ है। राजा को ब्रह्मानंद हुआ। जिनका नाम लेने से शुभ होता है, ऐसा तत्त्व मेरे घर आया! गुरु पधारे। निराकरण किया। ब्रह्म ने आपके घर जन्म लिया है, यह सुनकर राजा ने कहा, बाजा बजवाईए! उत्सव मनाईए! अयोध्या में रामजन्म उत्सव शुरू होता है। आज भाणतीर्थ में भाणसाहब की जन्मजयंती के अवसर पर कथा प्रवाह में आए रामजन्म की बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो!

धीरता, वीरता और उदारता का संगम मानी रघुबंस

'मानस-रघुबंस' की बातें हो रही है। 'रामचरित मानस' में कई कुलों का वर्णन है। कई वंशों का वर्णन है। मेरी समझ अनुसार 'रामचरित मानस' में वर्णित वंशों में कोई वंश बाकी नहीं है। कोई नये कुल, नये वंश उत्पन्न हो, नये नाम धारण करे तो स्वागत है। गुरुकृपा से मुझे दिखाई देता है वहां तक उसमें सब समाविष्ट है। एक प्रश्न है, 'बापू, रघुवंश, निशिचर वंश, विप्रवंश, दिनकर वंश, भृगुवंश; रघुकुल, पुलत्स्यकुल आदि-आदि कुलों और वंशों की बातें हैं। आप की दृष्टि से श्रेष्ठ कुल-वंश कौन-सा है?' श्रेष्ठ और निम्न की गिनती करने हम नहीं बैठे हैं। इसमें जाने की मेरी मानसिकता भी नहीं है। कई बार हम शास्त्र-दर्शन नहीं करते। या तो योग्य व्यक्ति द्वारा धर्मग्रंथों का श्रवण नहीं करते तब कई गलतफहमियां होती है। मैं 'महाभारत' का दर्शन कर रहा था तो मैंने पाया गुरुकुल, पांडुकुल; इसमें स्पष्ट लिखा है कि इस कुल में जन्मे कुलवान लोग समय मिलने पर ब्राह्मणों के घर जाते थे। आशीर्वाद-उपदेश ग्रहण करते थे। इस कुल-वंश के लोग जो कुलवान होते थे ऐसे लोग राज्य-राष्ट्र के व्यापार नीतिपूर्वक कैसे हो इसलिए बार-बार मिलते थे। मूल्यों को क्षति न पहुंचाये इसका भी ध्यान रखते थे। लक्ष्मणरेखा भंग न हो इसलिए क्षत्रियों से मिलते थे। समाज के दीन-हीन लोगों से सन्मान साथ मिलते थे। किस तरह निश्चित करे कि कौन-सा कुल श्रेष्ठ है? जो समाज के तिरस्कृत है उनके साथ एक आसन पर बैठकर बातचीत करते हो तो सिद्ध हुआ कि जो कुलवान है उससे बढ़कर वे ज्यादा कुलवान है। यह अपनी ओर से नहीं कहता। शास्त्र ठीक ढ़ंग से पढ़े नहीं गए! फ़िर से पढ़े जाए। निष्पक्ष, निर्वैर, निर्भय व्यक्ति द्वारा उसका श्रवण होना चाहिए। तभी सभी रहस्यों को उद्‌घाटित किए जाए। तुलसी, कबीरसाहब, नरसिंह मेहता इन सभी ने ये काम किया है। और आज भाणसाहब की समाधि तक गंगा बह रही है।

को बड़ छोट कहत अपराधू।

कौन बड़ा, कौन छोटा, यह कहने में अपराध होने का संभव है। लोग बहुत भोले हैं, उदार हैं; जो कभी कहे वह स्वीकार लेते हैं। कोई सवाल नहीं उठाता कि क्यों इन लोगों को दूर रखते हो? क्यों आप बहनों को अधिकार नहीं देते? क्यों आप स्त्रिओं का चेहरा नहीं देखते? क्यों आप किसी को अस्पृश्य मानते हैं? कभी ना माने कि ये ऊंच या नीच है। मोतियाबिन्द करवाइए! सभी ठीक हो जाएगा। सवाल है, व्यासपीठ की दृष्टि से कौन-सा कुल उत्तम है? मुझे उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ की चर्चा नहीं करनी है। मेरी हैसियत नहीं। पर जानना है कि कौन-सा कुल-वंश बड़ा है? तो जिम्मेदारीपूर्वक कहता हूं, जितने कुल होंगे वे महान होंगे। पर गुरुकुल जितना कोई कुल महान नहीं। इसकी काफ़ी जरूरत है। अपने यहां महापुरुष काफ़ी प्रवृत्ति करते हैं। यहां पर गुरुकुल मानी सिमेन्ट के मकान ही नहीं पर गुरु की कोख से जो जन्मे हैं। नौ-नौ महीने गुरु के यहां पके हैं, ऐसा गुरुकुल महान है। योग्य गुरु हमें मिलना चाहिए। तब माँ-बाप से ज्यादा गुरुजी हमें खुश रखते हैं। कुल तो आदमी को पछाड़ देता है! गुरु की कोख ऐसी है कि उस जैसा विशिष्ट कुल नहीं। या गुरुद्वार, जो भी माने।

सभी वंश महान है। रघुवंश का क्या कहना? मुझे चिठ्ठी-फोन मिले कि बापू, आप रघुवंशीओं को ज्यादा तुल देते हैं! लेकिन मैं कहता रहा कि महानता को बरकरार रखे यह खडग की धार है। नो डाउट, रघुवंश महान किन्तु सब से बड़ा और उत्तम वंश नादवंश है। बुंदवंश तो सब का है। हम सब माता-पिता के शरीर से जन्मे हैं। सब का अपना वंश है। अपनी परंपरा है। गुरु ने दिया हुआ शब्द का नाद। एक अनहद नाद। सूफ़ी जिसे एक हाथ की ताली कहते हैं। कोई वस्तु संघर्षित नहीं होती फ़िर भी उसकी आवाज़ आती है, जिसे अनाहत नाद है। मूल में हम सब का नादवंश है। यह हम भूल गए हैं। इसीलिए जगत को परिचय देने हम कुल, जाति बताते रहते हैं। जो परम की यात्रा करना चाहते हैं, जनम को सफल बनाना है तो सभी भेदों से बाहर निकलना चाहिए।

रघुवंश महान है। इसका वर्णन करने में कालिदास थकते नहीं। तुलसीदासजी ने 'रघुवंश' शब्द की बार-बार आवृत्ति की है। साथ ही साथ वे पावन रघुवंश में जन्मे भगवान राम रघुवंशीओं को सूचित भी करते हैं। हरि ने रघुवंश में अवतार लिया। जनक की पुष्पवाटिका में भगवान राम सीताजी को देखते हैं। उनका मन सहज रूप से पवित्र जानकी की ओर आकर्षित होता है। चर्चा करते-करते भगवान राम लक्ष्मण से कहते हैं, 'हे लक्ष्मण, यह जनकपुत्री सीता है। जिसके लिए इतना बड़ा धनुषयज्ञ हो रहा है। फ़िर तुलसी रघुवंशीओं के मन की अवस्था का वर्णन करते हैं। राम ईश्वर है; रघुवंश में जन्मे हैं। वंश से राम महान नहीं है, राम से वंश महान है। राम रघुवंश में जन्मे हैं फ़िर भी वे संकेत करते हैं-

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ।
मनु कुपंथ पगु धरइ न काऊ।।

'लक्ष्मण, रघुवंशी का स्वभाव है कि उसका मन कभी भी कुपंथ पर नहीं जाता।' बहुत कठिन है, साहब! रघुवंशी सरनेईम लिखनी सरल है! हम सब सूर्यवंशी है; प्रकाशपुत्र है। यहां रघुवंश महान है अत: कोई अपनी जात को लघुवंश न माने। यह सूत्र सब के लिए है; केवल रघुवंशीओं के लिए नहीं। जिसमें मन जैसा तत्त्व है, सब को लागू पड़ता है। सब की जिम्मेदारी है। मन गलत रास्ते पर न जाय।

मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी।

भगवान राम कहते हैं कि लक्ष्मण, मुझे तो रघुवंशी के नाते बहुत भरोसा है। कौन-सा भरोसा?

जेहिं सपनेहुं परनारि न हेरी।

जिसने सपने में भी परस्त्री का विचार नहीं किया है। यह रघुवंशी का लक्षण है जो सब को लागू होता है। बहुत कठिन है। गुरु हमारी आंख में अंजन डाले तो ही ये हो सकता है। हम जैसों का काम नहीं। गुरुचरणरज से आंख को निर्मल कर सके उसके लिए हैं। बाकी व्याख्या करनी यूं सरल है। कर्णप्रिय बोलना अच्छा लगे। परंतु संग्राम में पता चले! राम कहते हैं, 'मुझे मेरे मन पर भरोसा है। युवा भाईओं-बहनों, दो वस्तु को ध्यान रखना। जिसे अपनी जात पर प्रेम नहीं है उसे प्रेम की भीख मांगने पर भी प्रेम नहीं मिलता। जिसे अपनी जात पर भरोसा नहीं है वह चाहे जितना बोले कि मुझे भरोसा है पर यह दंभ है। देव पर भरोसा रखें, शास्त्र पर भरोसा रखें। अवश्य रखें, लेकिन अपने मन पर, जात पर भरोसा हो तो ही अपना भरोसा सच्चा होगा। राम रघुवंशी का एक ओर लक्षण बताते हैं-

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी।
नहिं पावहिं परतिय मनु डीठी।।

कौन रघुवंशी? जो कभी दुश्मन को पीठ नहीं दिखाता; कभी भागता नहीं। जो खुली छाती पर रहता है। यह

रघुवंशी का लक्षण है। दुश्मन ने कभी उनकी पीठ नहीं देखी। पीठ से अधर्म जन्मता है, वक्ष से धर्म जन्मता है। ऐसा हमारा शास्त्रीय उपदेश है। किसीने उनमें अधर्म नहीं देखा। उन्होंने कभी परस्त्री की ओर नहीं देखा। न कोई स्त्री उन्हें आकर्षित कर सकी। कईयों ने इनके मन को विचलित करने की कोशिश की। बुद्धपुरुषों पर भी प्रयोग हो चुके हैं। पर कोई भी तत्त्व इनके मन या दृष्टि को नहीं आकर्षित कर सका। प्रहार खाली जाता है। यह है रघुवंशी और रघुवंशीओं का लक्षण। शायद राम ही चरितार्थ कर सके। जिसने राम को बहुत भजा है। वे राम कृपा से, गुरु कृपा से आगे बढ़ सकते हैं-

मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं।

जिसके आंगन में याचक 'ना' शब्द नहीं सुनता वह रघुवंशी है। याचक मानी केवल वस्त्र या पैसे मांगनेवाले याचक की बात नहीं है। दु:ख आता हो याचक बनकर तो दु:ख का भी स्वागत करे। स्वागत और अपमान दोनों का स्वीकार करे। जिसका महामंत्र 'हा' है।

ते नरबर थोरे जग माहीं।।

'हे लक्ष्मण, ऐसे श्रेष्ठ नर दुनिया में थोड़े हैं। ऐसी चर्चा करते करते-

करत बतकही अनुज सन मन सिय रूप लोभान।

सुंदर कविता का अवतरण होता है। लक्ष्मण के साथ बात करते-करते भगवान का पवित्र मन अलौकिक जानकी के रूप में लुब्ध बना है।

मुख सरोज मकरंद छबि करइ मधुप इव पान।।

गलत अर्थ निकाले हैं। अत: कहता हूं, शब्दार्थों भी सच्चे नहीं होते! कम से कम शब्द से अटूट रहे। भावार्थ या तत्त्वार्थ नहीं चाहिए। न तो कोई गहन अर्थ निकालने हैं। न तो परम अर्थ निकालने है। हमें अपना सयानापन नहीं बढ़ाना है। न तो हमें अध्यात्म में कूदना है। है वैसा तो रहने दीजिए! इसमें भी गलत हुआ है या पाठांतर हुआ है! या भाषांतर गलत हुए हैं! मन लुभाता है। पर कौन-सा मन? पवित्र मन। कौन-सी शोभा में?

जासु बिलोकी अलौकि सोभा।

अलौकिक शोभा में मन खींच जाता है। अलौकिक तत्त्व की ओर हमें आकर्षण हो तो 'रामायण' आशीर्वाद देता है। अलौकिक तत्त्व के जतन हेतु हम में थोड़ा-सा आक्रोश आए तो 'रामायण' क्षम्य मानता है। अलौकिक वस्तु के प्रति मन में क्षोभ हो जाय और सचमुच मन पवित्र हो तो यह दूषित नहीं। सीताजी की ओर भगवान का मन आकर्षित हुआ है पर यह अलौकिक शोभा है।

तुलसीदास ने रघुवंशीओं के लक्षण इस तरह अंकित किए हैं। हम सब को लागू हो ऐसे ये लक्षणों पर हमें अपने जीवन विकास के लिए भी गंभीरता से सोचना चाहिए। प्रश्न ये है कि जिसमें ऐसी बुद्धता आई हो उसे पहचाने कैसे? ऐसे वंश के वंशजों की, ऐसे कुल के कुलवानों की पहचान के लिए थोड़े लक्षण ऐसे हैं जो हमारे जीवन को विश्राम दे सके। अब नादवंश के लक्षण। पहला लक्षण जो मेरी समझ में है, जिसके साथ आप सहमत हो यह जरूरी नहीं है। यह नादवंश की, गुरुकूख की चर्चा है। ऐसे एक गुरु के स्थान में हम बैठे हैं भाणसाहब के स्थान में।

लाग्या कलेजे छेद गुरुना, वेद ना जाणे इ वातुं,
एवा लाग्या कलेजे छेद गुरुना...

लोहाणा की व्याख्या दूं तो गुरुवचन से जो लहूलूहान हो जाय वह लोहाणा है। भीतरी विकारों का लहू निकल गया हो और विरक्ति का वेश आ गया हो वह लोहाणा है। हनुमानजी ने एक मुक्का लंकिनी को मारा तो लंकिनी के मुख से लहू का गरारा निकल गया! सद्गुरु जब मुक्का मारे तो रक्त का गरारा हो जाता है और विरक्ति का जन्म होता है।

गुरुकुल या तो नादवंश हम सब का परमवंश है। हम थोड़े लक्षणों पर विचार करें। जीवन के लिए थोड़े

पाठ कंठस्थ कर ले। मुझे ऐसा समझ में आया है कि जिस व्यक्ति के पास कोई प्रश्न नहीं है, समझना उसे ज्ञान प्राप्त हुआ है। उसने पूरा गणित समझ लिया है। उसका सब सुलझा हुआ है। बुद्धपुरुष रामकृष्ण ठाकुर लीजिए, ज्ञानेश्वर लीजिए। उनमें हम तीन वस्तु देख सकते हैं। तब समझना कि यह किसी नादवंश का वंशज है। किसी गुरु की कोख से जन्मा तत्त्व है। जो कई बार मौन रहना पसंद करता हो ऐसा बुद्धपुरुष। वे जानते हैं कि बोलने जैसा कुछ भी नहीं है। बोलना वाणी का व्यापार है। जिसके लिए जितना बोलते हैं उसके बारे में कुछ नहीं बोलना है। क्योंकि वे अज्ञात हैं। आखिर में वेद जितना कौन बोला? पर उसने भी आख़िर में 'नेति' 'नेति' कह दिया। इसलिए ये दूसरा लक्षण समझ में आ गया है। साहब! मैंने अपने गुरु, बुद्धपुरुष, सद्गुरु, त्रिभुवनदादा को बोलते नहीं सुना है। उसके रूद्राक्ष के मनके की आवाज सुनी है। कोई सत्संग करने आए तो कहे, 'कोई बात नहीं, जाने दो, मुझे भजन करने दो।'

दूसरा लक्षण मौन। जिसका स्वभाव मौन है उसे सद्गुरु मानिएगा, बुद्धपुरुष मानिएगा, ज्ञानीजन मानिएगा, बौद्ध प्राप्त समझना, जो समदृष्टि रखता हो। उनके वस्त्र, जाति, वंश मत देखना पर समग्र जीवन का परीक्षण करना कि वह कभी समदृष्टि चुका है? जो उच्च, निम्न, अपना, पराया नहीं पर निरंतर समदृष्टि में जीता है उन्हें भाणसाहब जैसा सद्गुरु समझना; रविसाहब जैसा सद्गुरु समझना। अगला लक्षण बुद्धपुरुष के जीवन से समझ में आया वह है, चेहरे पर परम संतोष। जिसे कोई असंतोष न हो। सिद्ध को तुम असंतुष्ट नहीं देखोगे। वो जगत को महान बनाने के लिए भरपूर प्रयत्न करेंगे। शायद न भी हो तो असंतुष्ट नहीं होंगे। कोई आये तो हर्ष नहीं, जाये तो गम नहीं। समचित्त बनकर रहे। 'गीता'कार का वाक्य मनपसंद है-

संतुष्ट: सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चय:।

कई महापुरुष देखूं; खास रामकृष्ण ठाकुर को देखूं तो उनके चेहरे पर कोई असंतोष की लकीर नहीं है। केन्सर की पीडा है। पानी भी नहीं पी सकते! फिर भी परम संतोष है। उनमें बुद्धता है। पांचवां लक्षण हर घडी उत्सव मनाना। इस आदमी की आंखें उत्सव मना रही है। यह चलता-फिरता गीत है, कविता है। हमें ऐसा लगे कि यह कदम भरता पद है। विराट का पद। किसी विराट ने सर्जन किया है। मानो ऐसे बड़े सर्जक ने एक कविता लिखी है। कभी दिगंबरी, कभी श्वेतांबरी तो कभी पीतांबरी में; अलग-अलग रूप में हमारे साथ रहते हैं। ऐसा जीवन हो मानों उसे कायम उत्सव है।

अगला लक्षण। कल निरंजनभाई कहते थे कि पत्थर को एक हजार साल पानी में रखिए फिर तोड़िये तो भीतर से जरा भी गिला न मिलेगा। ज्ञानप्राप्त महापुरुष जगत के पानी के बीच रहते हुए भी चाहे मृगजल, मायाजल, संसारजल हो उसमें जनमोजनम रहे पर उसका हृदय खोलकर जरा भी गिला न हुआ होगा, तो समझना कि इसे ज्ञान उपलब्ध हो गया है; उसको कुछ मिल गया है। मैंने रमेश पारेख के लिए कहा था, यह कुछ दृष्टि से परख गया है; इसका पांव कहीं पड़ चुका है। ये भी बुद्धपुरुष का एक लक्षण है। पर इसका अनुभव हम कैंसे कर सके? उनके पास जाने भी डर लगे पर उनके बिना रहा भी न जाय! ये उसका पहला लक्षण। डर लगे कि क्या बोले? बोले तो गडबड हो जाय और जो निश्चित किया हो वह सब भूल बैठे! फ़िर भी उनसे दूर जाना अच्छा न लगे। उनके कारवां में रहना अच्छा लगे। हम माया, काया, जगत के बारे में जो सोचते थे ये सब गलत अर्थघटन थे, प्रपंच था! यहां तो कुछ अलग नजारा है! हम उनके नजदीक जाय तो पता लगे कि यह कुछ अलग है! भाणसाहब कहते हैं-

जूठी काया, जूठी माया, जूठो आ जग जाणो,
साचो नाम एक साहेब को, भणे लुवाणो भाणो।

इतने शब्दों में सद्गुरु के कितने बड़े सत्य का उद्घाटन किया है! भाणसाहब कहते हैं, झूठी काया, झूठी माया। क्यों? चाबी दी है कि यह तो बोलने के लिए हैं। काया-माया झूठी नहीं है। जिस दिन साहब का नाम सच्ची रीति से पकड़ा जायेगा तब समझ में आ जायेगा। ऐसा लगे यह सब ठीक था पर आंख खुले तब लगे ये सब एक दिन चला जायेगा। इसका शोक न मनाए। अनेक प्रकार की भ्रांति का नाश तब होता है जब बुद्धपुरुष के निकट बैठे; और उसे समझ सके। नादवंश और गुरु की कोख से जो जन्मे हैं इन सबके थोड़े लक्षण समझ में आए हैं। रवीन्द्रनाथ टागोर कहते हैं कि जो ज्ञाता है उसके पास जाइए तो पता चलेगा कि उनके आसपास एक तेज वलय घूम रहा है। जब टागोर बुद्धदेव की चर्चा करते हैं तब कहते हैं, बुद्धदेव में मुझे तेज वलय दीखते हैं। एक तेज, आभा, प्रसन्नता। एक अद्भुत प्रभा; जो हमारी उष्मा बढ़ाए, उष्णता न बढाए। हमें स्फूर्त करे, संघर्षित न करे। उसका एक आभामंडल होता है। तीन सौ अठारह वर्ष हो जाय पर ज्योत वैसे ही प्रगट बनी रहे ऐसी बुद्धता उसमें दिखाई देती है। भाणसाहब की चेतना पूरे अस्तित्व में विलीन है। उसे ऐसा लगा होगा यहां कमीजडा में सब मिले और गाए। सो हम आमंत्रित है। 'भणे लुवाणो भाणो।' भाण कहते हैं, भटकना मत। 'मथी जो ने मांय' कितने ही उपनिषद से निकट की बाते है! दो समान लोग हाथ मिलाए वैसे ही उपनिषद के मंत्र और भाणसाहब के सूत्र हाथ मिलाते हैं। बहुत ही सरल भाषा में वे कहते हैं-

बोले ए बीजो नहीं, परमेश्वर पोते,
अज्ञानी ने आंधळो, अळगो जई गोते।
साचुं नाम साहेबनुं, जूठुं नहीं जराय,
भाण कहे भजी ले तो, भारे काम थाय!

अंतिम टुकडा अच्छा है। हम गांव में कहते हैं, इतना हो जाय तो बड़ा काम हो जाय! लड़के की सगाई हो जाय तो बड़ा काम हो जाय! यह महापुरुष कितने आराम से बड़े सूत्रों को लेते हैं!

रघुवंशी का एक लक्षण 'रामायण' ने भी बताया कि जो किसीकी अलौकिक प्रीति को देखकर प्रसन्नता से हंसता हो। किसीकी अलौकिक प्रेमभक्ति देखकर प्रसन्न हो यह रघुवंशी का लक्षण है। वह द्वेष, ईर्ष्या कभी नहीं करता। रघुवंशी की लाक्षणिकताओं का सारांश इतना कि भगवान राम सीता को देखकर विचलित नहीं हुए। उनमें धीरता है। राम ने कहा, रघुवंशी कभी पीठ नहीं दिखाता। उनमें वीरता है। याचक कभी खाली हाथ नहीं जाता ऐसी उदारता है। धीरता, वीरता और उदारता तीनों के संगम का नाम रघुवंशी है।

कल कथा के प्रवाह में हम सब ने मिलकर रामजन्म का उत्सव मनाया। कैकेयी माँ ने भी एक ही पुत्र को जन्म दिया। सुमित्रा ने दो पुत्र को जन्म दिया। दशरथ को चार पुत्रों की प्राप्ति हुई। एक माह तक उत्सव, आनंद चला। लोगों को परमानंद प्राप्त हुआ। एक माह बीत गया। वशिष्ठजी चारों राजकुमारों का नामकरण करते हैं। कहते हैं, 'राजन्! कौशल्या की गोद में जो बालक खेल रहा है, श्याम वर्ण है, जो आनंद सिंधु है, सुख का समूह है; इस बालक का कोई नाम लेगा उसे जन्मजन्मांतर विराम प्राप्त होगा, विश्राम प्राप्त होगा। जगत को जो आराम देगा उसका नाम राम रखूंगा। जो विराम, विश्राम, आराम दे वह राम है। कैकेयी के पुत्र का नामकरण करते वे बोले, 'राम जैसा सांवला रंग है। राम जैसा ही चेहरा है। राम जैसा ही शील, स्वभाव है, पूरे जगत का पोषण करेगा। किसीका शोषण न करे। अत: इसका नाम भरत रखता हूं। सुमित्रा के दो पुत्र जिनके नाम से शत्रु नहीं,

शत्रु की बुद्धि का नाश होगा। वैरी नहीं, वैर का नाश होगा। दुश्मन नहीं, दुश्मनी का नाश होगा। ऐसे बालक का नाम शत्रुघ्न रखता हूं। और समस्त सद्लक्षणों का भंडार, राम को प्रिय, जगत का आधार शेषनाग के रूप में है, ऐसे उदार चरित्र का नाम लक्ष्मण रखता हूं। वशिष्ठजी बोले, 'राजवी, ये तुम्हारे पुत्र नहीं, वेदों के सूत्र है।'

इस प्रसंग में समाज के साथ हर बार मुझे बात करने की इच्छा होती है तो रिपिट करता हूं कि हम जो राममंत्र जपते हैं उसीके साथ तीनों राजकुमारों के नाम की लक्षणा आए तो हमारा राममंत्र ज्यादा सफल होगा। भरत माने सबका लालन-पालन करनेवाले। रामनाम जपनेवाले समाज का पोषण करते हैं। समाज के किसी वर्ण का शोषण न करे। आज के समाज में कहीं धार्मिकता शोषण तो नहीं करती है? कहीं तथाकथित मंत्र दीक्षा कहीं गैर हेतु से तो नहीं दी जाती हैं? कहीं तथाकथित प्रेम भौतिक वसूलात तो नहीं करता? और ये सभी उपकरण चाहे तो समाज का अच्छी तरह से शोषण कर सकते हैं। शत्रुघ्न; रामनाम जपनेवाले किसीसे वैर न रखे। सामनेवाला भले रखे। कुछ तो आपके प्रति द्वेष रहेगा ही। कोई उपाय नहीं साहब! हमें बचना है। अंतिम सूत्र, लक्ष्मणजी उदार है। समग्र जगत के आधार है। रामनाम जपनेवाले उदार बने; बड़ी संख्या के आधार बने। हम हाईस्कूल न बना सके; ऐसा करनेवाले धन्य है, नमन के पात्र है। पर हम दो गरीब विद्यार्थी को युनिफार्म दे सके, अभ्यासक्रम की किताबें दे सके, ऐसा रामनाम जपते-जपते कर सके तो ऐसा रामनाम हमें ज्यादा विश्राम दे सके। हम बड़े अन्नक्षेत्र न बना सके पर जहां अन्नक्षेत्र चलते हो तब इच्छा हो तब राशन भेज दे बिना किसी पब्लिसिटी के तो रामनाम ज्यादा सार्थक होगा। संक्षेप में, हम किसीके प्रति बैर न रखे, शोषण न करे, आधार बने तो रामनाम सार्थक होगा।

चारों भाई कुमार अवस्था में आए हैं। यज्ञोपवित संस्कार हो चुका है। चारों वशिष्ठ आश्रम में अभ्यास करने गए हैं। भाईयों-बहनों, अपने बच्चों को पढ़ाईए। परिवार का भावि उज्ज्वल होगा। राम भी गुरु के यहां अभ्यास करने गए। अल्पकाल में सभी विद्या प्राप्त की है। गुरु से प्राप्त विद्या को आचरण में रखते हैं।

तुलसीजी प्रसंग बदलते हैं। विश्वामित्र रामदर्शन हेतु दशरथ के दरबार में आए। कहते हैं, 'महिपति, हमारे आश्रम के आसपास राक्षस रहते हैं। अनुष्ठों में बाधा डालते हैं। मैं अनुज सहित राम को मांगने आया हूं।' वशिष्ठजी ने सलाह दी। राजा का संशय तोड़ा। कहा, 'राम-लक्ष्मण को सोंप दीजिए।' राजा ने ऐसा किया। मुनिसंग दोनों भाई निकले। राघवेन्द्र ने एक ही बाण में ताडका वध किया। उसे निर्वाण दिया। मेरी व्यासपीठ कहती रही है कि प्रभु ने सबसे पहले एक नारी को निर्वाण दिया, जो राक्षसी थी। राक्षसों को मारने से पहले जिस भूमिका से

'रामायण' ने रघुवंशी का लक्षण बताते कहा, जो किसी की लौकिक नहीं पर अलौकिक प्रीति को देख प्रसन्नता से हंसता हो वह रघुवंशी है। किसी की अलौकिक प्रेमभक्ति को देखकर जो प्रसन्न हो वह रघुवंशी का लक्षण है। द्वेष या इर्ष्या करे यह रघुवंशी का लक्षण नहीं है। रघुवंश की समग्र लाक्षणिकताओं का सारांश यह कि भगवान राम ने सीताजी को देखा पर उनका मन विचलित नहीं हुआ। मतलब कि उनमें धीरता है। राम ने ऐसा कहा कि रघुवंशी कभी भी किसीको पीठ नहीं दिखाता। मतलब कि उसमें वीरता है। और याचक कभी खाली हाथ नहीं जाता, ये उनकी उदारता है। धीरता, वीरता और उदारता के त्रिवेणी संगम का नाम रघुवंश है।

पैदा होते हैं उस भूमिका का नाश किया। दुर्गुणों की बुनियाद हटाई। दूसरे दिन सुबह यज्ञ का आरंभ होता है। मारीच-सुबाहु बाधा डालने दौड़े हैं। सुबाहु को अग्निबाण से भस्म किया। मारीच को बिना नोक का बाण मार कर समुद्र तट पर लंका की ओर फेंक दिया है। एक दिन विश्वामित्र ने कहा, 'अभी दो यज्ञ अधूरे हैं। अहिल्या की प्रतीक्षा का यज्ञ और जनकपुर में महाराज जनक का धनुषयज्ञ। धनुषयज्ञ की बात से हर्षित राम मुनियों के साथ यात्रा करते हैं। रास्ते में एक आश्रम आता है। कोई पथ्थरदेह पड़ा है। इस दृश्य को देखकर भगवान राम विश्वामित्रजी को पूछते हैं, भगवान यह कौन है? जवाब दिया, यह गौतमनारी शाप के आधीन है। पथ्थरदेह हो गई है। आप चरणधूलि दान कर उनका उद्धार कीजिए। राम सोचते हैं, हम रघुवंशी है। एक ऋषिपत्नी पर पांव कैसे रखें? कुछ मर्यादा है। संतों ने समाधान ढूंढे हैं। राम पांव उपर उठाते हैं। उसी वक्त पवन लहरी आई। चरणरज उड़ी। पथ्थरदेह अहिल्या पर पड़ी। अहिल्या एकदम खड़ी हो गई। उस वक्त अहिल्या का सिर राम के पांव को छू गया। राम ने पांव नहीं छुआया था। अहिल्या को धूलि स्पर्श हुआ और प्रगट हो गई। कई आदमी विचारशील होते हैं। उन्हें भी वंदन करते हैं। पर वे विचारक ही होते हैं, उद्धारक नहीं। राम दोनों है। अहिल्या का उद्धार किया। कई उद्धारक होते हैं पर स्वीकारते नहीं। गौतम ने जिसका त्याग किया था उसका स्वीकार राम ने करवाया। राष्ट्र को तीन वस्तु की जरूरत है। मानव विचारक होना चाहिए; उद्धारक होना चाहिए और स्वीकारक होना चाहिए। भगवान राम ने गौतम द्वारा अहिल्या का स्वीकार कराया। अहिल्या धन्य हो गई। पतिलोक की ओर गति कर गई।

भगवान राम गंगातट पर आए। गंगास्नान किया। वहां से भगवान जनकपुर पहुंचे हैं। जनकराजा को पता चलने पर विश्वामित्र आदि का सन्मान कर सुंदर सदन में निवास दिया है। दोपहर का समय है। प्रभु ने भोजन कर विश्राम किया। शाम को नगरदर्शन करने गए। पूरी मिथिला उनके रूप में डूब गई है। दूसरे दिन पुष्पवाटिका में राम-जानकी का मिलन हुआ। उस समय तुलसी ने रघुवंशीओं के स्वभाव का वर्णन किया है। जानकी ने दुर्गास्तुति की। माताजी ने आशीर्वाद दिए कि तुझे राम मिल जायेंगे। राम फूल लेकर गुरुजी के पास आए। गौरी की पूजा कर जानकीजी माँ के पास गई। दूसरे दिन धनुषयज्ञ था। सभी राजा-महाराज धनुषयज्ञ में आने लगे। राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ आए। कोई भी धनुष तोड़ नहीं सका। क्योंकि सभी अकेले आए थे। अहंकार तभी टूटे जब गुरु साथ हो। राम विश्वामित्र के साथ आए थे इसलिए धनुष तोड़ दिया। दो टुकड़े कर धरती पर डाले। जानकीजी ने वरमाला पहनाई। परशुराम आक्रमक बनकर आए। राम का प्रभाव देखकर कहते हैं-

जय रघुबंस बनज बन भानू।
गहन दनुज कुल दहन कृसानू।।
कहि जय जय जय रघुकुल केतू।
भृगुपति गए बनहि तप हेतू।।

भगवान राम की जयजयकार कर परशुरामजी चले गए। विश्वामित्रजी ने जनक से कहा, धनुषभंग हुआ। वंश व्यवहार अनुसार पत्र लेकर अयोध्या दूत भेजिए। अवध गए। दशरथ बारातियों के साथ जनकपुर आए। माघ सुद पंचमी, गोधूलि बेला राम-जानकी के साथ लक्ष्मण-ऊर्मिला, श्रुतकीर्ति-शत्रुघ्न, भरत और मांडवी का ब्याह एक ही मंडप में होता है। थोड़े दिनों के बाद बारात लौटी। रास्ते में रुकते-रुकते सभी अयोध्या पहुंचे। जानकी के आने के बाद अयोध्या की समृद्धि बढ़ी है। मेहमान बिदा हुए। आखिर में विश्वामित्र की भी बिदाई हुई।

एक आंख में तेज और एक आंख में करुणा यह रघुवंशी का लक्षण है

'मानस-रघुबंस' में जो बात केन्द्र में लेकर हम रामकथा गा रहे हैं, इसमें कविकुल गुरु कालिदास 'रघुवंश' में रघुवंशी की विशिष्टताओं का वर्णन करते हैं उसका आश्रय और साथ में वाल्मीकिजी का आधार ले पर मूल में तो मेरा आधार 'रामचरित मानस' है। इसमें रघुवंशीओं के लक्षणों का दर्शन महापुरुषों ने कराया है। इसका हम स्मरण कर रहे हैं। हमारे देश-काल के अनुरूप जो प्रासंगिक सूत्र है, सर्वकालीन है, ऐसे लक्षणों को आगे बढाएं तो हम जीवन के विश्राम और विकास को प्राप्त कर सकेंगे। रघु महाराज ने शैशव में विद्याप्राप्त की; दिलीप ने उसे पढ़ाया तब ऐसा लिखा है कि जिसे समुद्र की उपमा दे सके; समुद्र जैसी गहन चार विद्याएं रघु ने प्राप्त की। गुरुकृपा से इतना समझ सका हूं कि कालिदास कथित चार विद्याएं है वो विद्याओं हममें आनी चाहिए। हम गंभीरतापूर्वक प्रयत्नशील रहे। पहली विद्या आन्वीक्षिकी विद्या। दूसरी त्रयी, तीसरी वार्ता और चौथी दंडनीति है। इन चारों की आज भारत को और सुंदर पृथ्वी को जरूरत है। सुंदर रमणीय वसुंधरा में यह चारों रघुवंशी विद्या स्थापित होनी चाहिए।

प्रथम है आन्वीक्षिकी; उसका शब्दकोश में कई अर्थ है। इसके शास्त्रीय अर्थ में नहीं जाना है। मेरे सामने सत्तर प्रतिशत ग्रामीण जनता है। उन तक पहुंचना मेरा हेतु है। संक्षेप में कहना है। आन्वीक्षिकी विद्या का एक अर्थ है, एक ऐसा आदमी जिसकी एक आंख में तेज हो और दूसरी में करुणा; तेज जलाए ऐसा नहीं पर हमें प्रकाशित करे। जिससे हम सामनेवाले की करुणा का अनुभव कर सके। जो हमें भीतर से खोले; जिससे हम भाणसाहब की करुणा का अनुभव कर सके। इन महापुरुषों के पास करुणा के सिवा क्या है? परंतु हम इस करुणा का अनुभव क्यों नहीं कर सकते? क्योंकि हम किसी तेज द्वारा भीतर से प्रकाशित नहीं है। ऐसी दो आंखें हमें मिल जाय। ऐसी विद्या हमें मिले; देश को मिले; पृथ्वी को मिले पर हमें उष्ण न करे पर हमारी ऊर्जा को जागृत करे। सूर्य का तेज भी चन्द्र जैसा लगे। इस धरती पर जो बुद्धपुरुष हुए, सबके पास आन्वीक्षिकी विद्या थी। एक अर्थ यह भी है कि एक ऐसी विद्या कि इन दो वस्तु का प्रयोग सिद्ध किए जाय। हम अनुभव कर सके इस तरह रखी जाय। किसी महापुरुष ने औपनिषदीय विद्या भी कही है। 'सभी सयाने एक मत।' सबके एक सत्य देखने के अलग-अलग मार्ग है, दृष्टिकोण है। कोई दो आंखें हमें देखें ऐसी एक विद्या पर मैली विद्या नहीं। इक्कीसवीं सदी मैली विद्या के लिए नहीं है। झूठे चमत्कार फैलाने के लिए नहीं है। इक्कीसवीं सदी आन्वीक्षिकी विद्या के लिए है।

रघुवंश की चर्चा करते-करते गोस्वामीजी बताते हैं, रघुवंश भूषण राम कैसे थे?

रघुबंस बिभूषन दूसन हा।
कृत भूप बिभीषन दीन रहा।।

परमात्मा रघुकुल का ऐसा भूषण है, जो दूषण को खत्म करता है। कौन-से दूषण? हमारे यहां छः विकार है-काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर। पर यहां जो दूषण है वे गुरुमुखी अध्ययन अनुसार इर्ष्या और द्वेष है। रघुवंश भूषण

भगवान राम ऐसे परमतत्त्व हैं कि हम में से द्वेष और इर्ष्या का नाश करे। काम का नाश करने की बात नहीं है। काम तो एक प्रकृति है। सम्यक्ता रहनी चाहिए। इसके बिना दुनिया चले कैसे? क्रोध को पित्त कहा है। पर पित्तप्रकोप न हो तो तंदुरस्ती के लिए पित्त अच्छा है। आयुर्वेद अनुसार वात, पित्त, कफ़ तीनों सम्यक् रूप रहे तो आदमी तंदुरस्त रहता है। पर प्रकोप हो तब रोगी बनते हैं। मेरी दृष्टि से दूषण का अर्थ इर्ष्या और द्वेष है। हम से ज्यादा कोई उपर उठे कि नेटवर्क शुरू हो जाते हैं; षड्यंत्र शुरू हो जाता है; रामकथा सुनने के बाद इर्ष्या-द्वेष मुक्त हो जायेगा तो जीवन धन्य हो जायेगा। कई लोग देश छोड़ दे पर द्वेष नहीं छोड़ते! पर सत् हो तो आदमी द्वेषमुक्त हो जाय। कोई किसीका उत्कर्ष नहीं देख सकता! द्वेष बड़ा षड्यंत्र रचता है कि किसकी डोर काटे? यह शारीरिक-मानसिक रोग है। इसकी कोई दवा नहीं। दवाखाने में डोक्टर ही बीमार हो तो क्या किया जाय? धर्मजगत भी इससे पीड़ित है! क्षमा करना, मुझे क्षमा करना, हम ऐसे षड्यंत्र नहीं रचते हैं? क्या राजनेता षड्यंत्र नहीं रचते? सामाजिक संस्थाएं नेटवर्क नहीं करती? कागबापू याद आते हैं -

कोण सजायो? कोण सराणुं? कोण दोरडी खेंचणहार?
जीवता राखीने जीव लेती ए, केवी हती तरवार?
रुदा केरा म्यानमां रे'ती... क्यारे क्यारे नीकळती बार...
बोलो, भाई! बंगला! बोलो... हैयानी हाटडी खोलो...

निंदा जीभ से होती है और इर्ष्या और द्वेष जीव से होता है। हमें पता भी न चले! ये सब पर लागू नहीं है बाप! जिसने यह समझ लिया है वह कभी किसी का द्वेष नहीं करता। उसने तो द्वेष का देशनिकाल किया है। बहुत कठिन है। निष्कुळानंद स्वामी कहते हैं -

त्याग न टके रे वैराग विना, करीए कोटि उपाय जी.
अंतर ऊंडी इच्छा रहे, ते केम करीने तजाय जी.
वेश लीधो वैरागनो, देश रही गयो दूर जी;
उपर वेश अच्छो बन्यो, मांही मोह भरपूर जी.

भीतर कितनी एषणाएं होती है! यह जानकीदासबापू की प्रशंसा करने का कोई कारण नहीं है। वे मुझे एक रूपया भी दक्षिणा नहीं देंगे। दे तो मैं लेनेवाला भी नहीं। वे देने की हिंमत नहीं करेंगे और मैं लूंगा नहीं। कल उन्होंने जब बात की तब अंदर से 'साधु' शब्द निकल गया! उन्होंने कहा, मैं अपने सेवकों को अपने साथ नहीं जोड़ता; सीधे समाधि से जोड़ता हूं। यह भाव गुरुकृपा से हंमेशा बना रहे। महंत हूं इसलिए मुझे करना पड़े। पर मेरा सेवक भाव वैसा ही बना रहे। ये बहुत बड़ी बात है। ये गुरुसेवन का प्रताप होगा। यह भाणसाहब का आशीर्वाद है, नहीं तो ऐसा न सूझे। 'रामायण' में लिखा है -

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि ।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि ।।

'अयोध्याकांड' का पहला दोहा; और 'हनुमानचालीसा' का आरंभ यहीं से होता है। इसमें लिखा है कि धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार फल है। ये फल है पर इसका रस कौन-सा? तलगाजरडा कहेगा, धर्म का रस वैराग है। तलगाजरडा को यह 'रामायण' से सूझा है -

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना ।
ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना ।।

सभी रस फ़ीके पड़ जाय, जिसमें वैराग्य रस आया हो। पर द्वेष और ईर्ष्या के आने से षड्यंत्र रचे जाते हैं। रघुकुल की आन्वीक्षिकी विद्या इस पर काम कर सके। थोड़ा स्वास्थ्य दे सके।

रघुवंशीयों, एक आंख में तेज और एक आंख में करुणा रखना है। यह रघुवंशीओं का एक लक्षण है। समुद्र जैसी गहरी और विशाल चार विद्याएं रघु गुरुकल में प्राप्त करते हैं। ऐसा कविकुलगुरु कालिदास लिखते हैं। दूसरी विद्या त्रयी है, जिनका अर्थ भाष्यकारों से मिलता है, तीन वेद। आन्वीक्षिकी का एक अर्थ प्रयोग किया विज्ञान है। गांधीजी कहते थे, संवेदनहीन विज्ञान सामाजिक पाप है। आज अवश्य शिक्षण में विज्ञान है। साथ-साथ वेदविद्या विषय भी होना चाहिए। विज्ञान-विद्या और वेदविद्या; यह त्रयी है। रघुकुल के रघुओं ने धारण की है वेदविद्या। वेदविद्या संवेदना को बरकरार रखती है; संवेदना को निरंतर प्रकट करती विद्या है। ऐसी विद्या जो रघु पढ़े हैं। इस त्रयी को मुझे तलगाजरडी दृष्टि से अर्थ करना हो तो वह है सत्य, प्रेम, करुणा। मेरे लिए यही प्रस्थानत्रयी है। गुरुकृपा और आपके आशीर्वाद से जितनी मात्रा में हो सके इतना प्रस्थान करे। इस पर चले तो बेडा पार! यह सत्य, प्रेम, करुणा की त्रयी।

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ।

यों सूत्र रूप में गिने तो रघु में सत्य है ही। रघुकुल में आये भगवान राम में पूरा सत्य है।

रामो विग्रहवान धर्म साधु सत्य पराक्रम ।

राम में सिवा प्रेम के और क्या है?

रामहि केवल प्रेमु पिआरा ।

और राम करुणामूर्ति है।

कारुण्यरूपं करुणाकरंतं श्री रामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये ।

यह सत्य, प्रेम, करुणा की विद्या है। 'रघुबंश' में तीसरी विद्या का नाम वार्ता है। वार्ता माने संवाद। विग्रह नहीं करना, बातचीत करनी है। राजाओं के लिए भी उपयोगी है। सीधे लड़ना नहीं। वार्ता, संधि, संवाद कीजिए। यह कथा ही संवाद की है। विवाद है ही नहीं। बिना वजह विवाद खडा कर दे तो अलग बात है। रावण ने बहुत कुछ किया फिर भी राम वार्ता का पक्ष लेते हैं कि हे अंगद, राजदूत के रूप में तू जा और रावण को समझा। यदि संवाद सिद्ध हो तो संघर्ष नहीं करना है। संवाद की स्थापना 'रामचरित मानस' ने की। वार्ता ऐसी वस्तु है जो सबको एकत्र करे। स्कूल में वार्ता कहे तो अच्छा है। हम छोटे थे तब हमारे गुरुजन वार्ता कहते थे। अब कोई नहीं कहता! और बच्चों को सुननी भी नहीं है! कैसी वार्ताएं!

वारता रे वारता, हे जी, वारता रे वारता,
भाभो ढोर चारता...

ऐसी कथा होती है! लेकिन किसी भी तरह आप तक पहुंचना है। आपके कान नहीं भरने हैं पर कान तक पहुंचना है। कान में निंदा नहीं डालनी है। कान के देवता को जागृत करने हैं। मेरे देश के शास्त्रों को सुनिए; संतों को सुनिए। रवि-भाण परंपरा ने कितने सीधे-सादे शब्दों में हमारे कान में अमृत घोला है! और इसे कहने का अधिकार किसका था? किसी वाल्मीकिभाभा, व्यासभाभा, वशिष्ठभाभा को है। ये सभी प्रज्ञावान है। अनुभव के कैलास पर आसीन व्यास और वाल्मीकि ने ढोर ही चराए हैं! हम ढोर ही तो है! इतनी कथाएं सुनी फिर भी द्वेष मुक्त नहीं हुए! पशु नहीं तो और क्या? मैं इतनी गुहार लगाता हूं फिर भी द्वेष नहीं जाता! वाल्मीकि ने, प्रौढप्रज्ञा ने हम जैसे पशुओं को सुधारने की कोशिश

> मेरी दृष्टि से दूषण का अर्थ है इर्ष्या और द्वेष। किसी भी क्षेत्र में हम से ज्यादा कोई उपर उठे कि नेटवर्क शुरू हो जाय; षड्यंत्र शुरू हो जाय! क्योंकि द्वेष और इर्ष्या षड्यंत्र कराये बिना नहीं रहते! रामकथा सुनने के बाद द्वेष जितना कम हो सके इतना कीजिए। हमारा जीवन धन्य होगा। कई आदमी देश छोड़ दे पर द्वेष नहीं छोड़ते! लोगों में कितना द्वेष जगता है! कोई किसी का उत्कर्ष नहीं देख पाते! कोई किसी को दाद नहीं दे पाते! द्वेष तो किसकी डोर काटनी ऐसे षड्यंत्र करता है। हां, ये मानसिक रोग भी है और शारीरिक रोग भी है।

की है। 'महाभारत', 'रामायण' जैसे ग्रंथ दिए हैं। वार्ता से विश्राम मिलता था। तो तीसरी विद्या है वार्ता।

चौथी विद्या दंडनीति है, जो रघु पढ़े है। रघु को सीखाया गया कि कल तू राजा बनेगा। दिलीप के कुल में युवराज पद मिलेगा। अत: चौथी विद्या दंडनीति सीख ले। दंड को नीति कहा है। अपने यहां साम, दाम, दंड, भेद को नीति कही है, अनीति नहीं। दंड नीतिकारक है। यह जरूरी है, नहीं तो दुनिया ठप्प हो जाय। गुनहगार को दंड मिलना चाहिए। पर दंड देनेवाले के मन में द्वेष नहीं होना चाहिए। द्वेषमुक्त चित्त से दंड देना चाहिए।

रघुवंश का बड़ा योगदान चार विद्याएं हैं। आन्वीक्षिकी के अनेक अर्थ है। ऐसी विद्या जिसकी आंख में तेज हो; जो प्रकाश दे। और करुणा से सिक्त कर दे, हमें कृतकृत्य करे। दूसरी विद्या सत्य, प्रेम, करुणा की त्रयी-प्रस्थानत्रयी। तीसरी विद्या विवाद, दुर्वाद, अपवाद नहीं, संवाद की विद्या हो। चौथी द्वेषमुक्त चित्त द्वारा की गई दंडनीति। 'मानस'कार ने ऐसी रघुवंशीयों की नीतियों का वर्णन किया है।

रघुवंश का एक लक्षण-रघुकुल के भूषण राम ईर्ष्या, द्वेष, निंदा को नष्ट करते हैं। नष्ट करते हैं या निर्वाण देते हैं? दीन-हीन प्रपन्नभाववाले विभीषण को राजा बना दिया। दूषणों का निर्वाण किया। दीन को राजा बनाने का काम ओर कोई नहीं कर सकता है, ऐसा काम राम ने किया। इस तरह किया जिसका किसीको पता न चले इसीतरह धनुभंग किया। तुलसी कहते हैं, राम ने बिना प्रयास ये किया। रघुकुलमणि ने इतना बड़ा धनुष हाथी ज्यों मूलरहित कमल को उखाड़ फेंके उसी तरह सहजरूप से किया! किसके बल से किया? गुरुप्रसाद से किया। जब कर्तापना का भान न रहे तब समझना कि सभी कार्य गरुकृपा से होते हैं। यह रघुकुल का स्वभाव है। ये प्रकाशपुत्र का स्वभाव है। यहां बड़े मंडप तले हजारों आदमी भोजन करते हैं। सभी ने सहजरूप से स्वीकार लिया है। समझ ले, यह भाणसाहब के प्रसाद से होता है। किसी गुरुप्रसाद से धनुष टूटता है। यह विवेक रघुवंशीयों का लक्षण है।

दुर्गम काज जगत के जे ते ।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे ते ते ।।
प्रभु कीं कृपा भयउ सबु काजू ।
जन्म हमार सुफल भा आजू ।।

कथाक्रम बढ़ाएं। 'अयोध्याकांड' का आरंभ होता है। गोस्वामीजी संस्कृतवाणी में मंगलाचरण करते हैं। 'अयोध्याकांड' के पहले मंत्र में शंकर भगवान की स्तुति की है। डोंगरेबापा की कथा दो बार सुनी तब मैं पढ़ता था। तब वे कहते थे, 'रामायण' का 'बालकांड' मानव का बचपन है। 'अयोध्याकांड' यौवन है। तब मुझे लगा, युवानी में पहले ही मंत्र में शिवस्तुति होनी चाहिए। इससे यौवन देदीप्यमान होगा। तुलसी जिस रीति से शिवस्तुति करते हैं उसमें 'यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके' भगवान शंकर की बायीं ओर हिमालयपुत्री भवानी बैठी है। दर्शनानुसार लिखा है। युवा, तू अपनी पत्नी के साथ वार्तालाप करे तो रामकथा प्रकट होनी चाहिए। विवाद मत करना। समाज की पार्वती और शिव यौवन में यदि ऐसा शिवसंकल्प करे तो 'अयोध्याकांड' देदीप्यमान बने। पर थोड़ा मुश्किल हो जाता है। आजके देश-काल में दांपत्य जीवन हील गया है। हे मेरे देश के युवा, तुम ब्याह करना। दांपत्य जीवन सुंदर बनाना। पर आपके दिमाग में धीरे-धीरे भक्ति और प्रेम की गंगा बहती रखना। क्योंकि शंकर के मस्तक में गंगा है।

यस्याङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट् ।

शंकर के ललाट में भालचंद्र है। हे युवक, संयम का तेज तेरे ललाट पर रखना। देश का युवक कैसा हो इसका निरूपण है। कंठ में ज़हर है। क्योंकि युवानी में तुझे बदनामी, गलतफ़हमियां, समस्याओं ऐसे कितने ज़हर पीने पड़ेंगे। उस समय आत्महत्या का रास्ता मत लेना। शंकर को याद कर ज़हर पचा लेना। पेट में न उतारना; उल्टी न करना। तेरी कंठ की शोभा बनाना। नीलकंठ बनना। महादेव सर्पों के आभूषण पहनते हैं। युवानी में आभूषण पहनना। पर ज्यादा आसक्ति होगी तो ये भुजंग बनकर दंश मारेंगे। कलापी कहते हैं -

जे पोषतुं ते मारतुं एवो दीसे क्रम कुदरती.

जो पोषण करे, कहीं वही तेरी समृद्धि को दंश न दे। खबरदार रहना।

सोऽयं भूतिविभूषण: सुरवर: सर्वाधिप: सर्वदा ।

शिवजी ने भस्म का लेपन किया। युवान, तू बहुत आनंद करना मर्यादा में रहना; लेकिन शरीर एक बार भस्म होगा इसका स्मरण रखना। यों शिवस्तुतिकर युवानी को बोध दिया है। दूसरे मंत्र में राज्याभिषेक की बात आई तब राम के चेहरे पर कोई प्रसन्नता नहीं। बनवास की बात आई तब कोई ग्लानि नहीं। मुखांबुज की जो कान्ति थी वैसी की वैसी रही, ऐसे राम को प्रणाम किए। 'अयोध्याकांड' के आरंभ में -

श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि ।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि ।।

मुझे कहने को मन होता है कि युवानी का कांड है अत: पहले गुरुवंदना जरूरी है। युवानी में कोई गुरु मिल जाय तो युवानी में चार चांद लग जाय। युवानी में गुरु मानना या इस तरह जीए कि गुरु हमें खोज ले। क्योंकि शिष्य गुरु को ढूंढ नहीं पाता। समय आने पर गुरु ही हमें खोज लेता है। और वह अकेले में सोचेगा कि जैसा मिलना चाहिए वैसा ही मिल गया। युवानी में पढ़ना। डिग्रियां लेना। विदेश जाना। कमाना और कमाई में से दसवां हिस्सा निकाल लोगों की सेवा करना। गुरुशरण जाना। इक्कीसवीं सदी में कोई गुरु आपको कार्यक्षेत्र नहीं छुड़वायेंगे कि आप इजनेरी-डोक्टरी छोड़ दीक्षा ले लीजिए। पर ऐसा कहेंगे, तू अच्छा डोक्टर, इजनेर बन सेवा करना। पर तुझे हरि भजना है। इस तरह 'अयोध्याकांड' की महिमा समझाई है।

राम के ब्याह के बाद अयोध्या की समृद्धि बढ़ी। रिद्धि-सिद्धि की नदियां छलक उठी। सुख की बरसात हुई। गांव में आठ दिनों की मूशलाधार बारिश के बाद कहे कि अब बारिश बंद हो तो ठीक लगेगा। कपड़े सूखते नहीं, न तो चूल्हे जलते हैं, न तो रोटी बनती है! हे सूरजनारायण, तू निकल। जीवन के लिए थोड़ी गर्मी आवश्यक है। धूप आवश्यक है। अयोध्या में इतने सारे सुख आए इसके बाद चौदह साल बनवास की धूप आई। दशरथजी एक बार दरबार में बैठे हैं। कान के पास सफेद बाल देखा। राजा के कान में वृद्धावस्था ने संदेश दिया कि अब वृद्धत्व आ गया। राम योग्य है। युवराजपद दे दीजिए। दशरथजी ने वशिष्ठजी से बात की। गुरुदेव ने कहा, विलंब न कर। मुहूर्त की जरूरत नहीं। राम गद्दी पर आसीन हो वही शुभ मुहूर्त है। दशरथ ने कहा, कल रखे। कल की मुद्दत के बीच में एक ममता की रात आई। इस अंधेरी रात ने बाजी बिगाड़ दी। परिणाम यह आया कि कैकेयी ने भरत का राज्याभिषेक और राम को वनवास ऐसे दो वचन मांग लिए।

राम-लक्ष्मण-जानकी तीनों वनवास के लिए निकल पड़े हैं। समस्त अयोध्या पीछे निकली है। सरजू तट पर रात्रि मुकाम है। समस्त अयोध्या थकान और शोक के कारण सो गई है तब राम-लक्ष्मण-जानकी सुमंत के रथ में चुपचाप शृंगबेरपुर पहुंच गए। सुबह पूरी अयोध्या राम को न देखकर आक्रंद करती लौट गई। गंगा तट पर केवट ने पग पखारे। तीनों गंगा पार गए। पदयात्रा शुरू कर भरद्वाजजी के आश्रम में पहुंचे। भगवान उन्हें रास्ता पूछते हैं। जीवन का रास्ता ऋषि से ही पूछना चाहिए। ऋषियों से मिलते-मिलते वाल्मीकि के आश्रम में पहुंचे। वाल्मीकि ऋषि ने भगवान राम को चौदह आध्यात्मिक स्थान बताए। साकेतवासी ब्रह्मलीन पंडित रामकिंकरजी महाराज के अनुसार चौदह स्थान माने चौदह प्रकार की भक्ति बताई है। फिर तीनों चित्रकूट में निवास करते हैं।

सुमंत लौटे। दशरथ ने प्राणत्याग किया। भरत नैनिहाल से आए। पितृक्रिया की। राज्य व्यवस्था के बारे में चर्चा हुई। भरत ने कहा, मैं अहम्‌वादी नहीं, चरणों का दास हूं। मैं सत् का आदमी हूं, सत्ता का आदमी नहीं हूं। फिर भी एक बार प्रभु से मिलने जाय। राम जो कहेंगे वही करूंगा। मेरे रोग का औषध रामदर्शन है। समस्त अयोध्या चित्रकूट पहुंचती है। राम-भरत मिलाप हुआ। जनकजी भी आए। बड़ी-बड़ी सभाएं हुई। आखिर भरतजी ने इतना कहा, आप का मन प्रसन्न हो ऐसा आदेश दीजिए। यह शरणागति है। जो गुरुजी की इच्छा। शरणागति कठिन विद्या है। पर जो शरणागत हुए हैं उनके समान जगत में सुखी कोई नहीं। शरणागति बिना साधन संपादन हो सके पर सुख संपादन न हो सके। भरत ने ऐसी शरणागति की घोषणा की है। प्रभु की आंखों में आंसू है। प्रभु ने कृपा कर पदत्राण अर्पित किए। भरतजी इसे लेकर लौटे हैं। चित्रकूट के वृक्ष की डाली पकड़कर भरत और पूरे समाज को देखते रहे। भरत के स्मरण में प्रभु का हृदय भारी हो गया। भगवान को भी भक्त का विरह साहता है।

भरत-जनक का समाज अयोध्या पहुंचा। शुभदिन पर पदत्राण सिंहासन पर रखे। विश्ववंद्य गांधीबापू ने इस प्रसंग पर से भारत को ट्रस्टीशीप का सिद्धांत दिया कि तुम मालिक मत बनिए। ट्रस्टी बन सब संभालिए। ट्रस्टीशीप का सिद्धांत यह 'रामचरित मानस' की विचारधारा है। भरत ने महाराज वशिष्ठ के पास पहुंच कहा, राम-लक्ष्मण-जानकी बन में रहे, कुटिया में रहे, वल्कल पहने तो मैं अयोध्या में कैसे रहूं? मैं नंदिग्राम जाकर रहूं? वशिष्ठजी ने कहा, हम आचार्य के रूप में, ऋषिरूप में जो कहते हैं, यह धर्म है। पर तू जो निर्णय करे यह धर्म का सार है। माँ कौशल्या खुशी से हां कहे तो ही

रहना। कौशल्या का हृदय दु:खी हुआ तो तेरी रामभक्ति सफल नहीं होगी। लोग कहते हैं, ज्ञानमार्ग तलवार की धारा है पर भक्ति का मार्ग तो इससे भी कठिन है। माँ का दिल दु:खी नहीं होना चाहिए। मैं भी कहता हूं, आप भजन करे तो ध्यान रखिए कि परिवार के किसी का भी दिल दु:खी न हो। आप कहे, मैं तो भजन करता रहूंगा। संतानों को पसंद न आए तो थोड़ा आराम कीजिए। उन्हें खुश रखने के लिए सो जाईए। वे सो जाए बाद में रात तो आप ही की है। भजन को जितना गुप्त रखिए उतना ही पकेगा। उसका प्रचार न करे। बीज जमीन में जितना दबायेंगे उतना ही उगेगा। दिन में हमें उद्‌घाटनों में जाना पड़े, शादी में जाना पड़े, सब का मन रखना पड़े। रात में व्यर्थ ही जगने के लिए नहीं कहता। पर निंद न आए, काम भी न हो तब बैठे-बैठे चुपचाप हरिनाम लीजिए। यह अविस्मरणीय रहेगा। साहब, भजन तो रात को ही होते हैं।

भरत माँ कौशल्या के पास आए। मुंह नहीं खोलता! माँ समझ गई कि इसे कुछ कहना है। पुत्र को माँ समझे इतना जगत में कोई न समझे! 'माँ, मुझे लगता है तुझे दु:ख देने ही मेरा जन्म हुआ है! मेरा जन्म न होता तो राम को बन में न जाना होता। पिता को स्वर्ग न जाना होता। सभी अनर्थों का कारण मैं हूं।' फिर डरते-डरते कहता है, 'माँ, तू हाँ कहे तो नंदिग्राम रहूं? वल्कल पहनूं? कुटिया में रहूं?' माँ समझ गई। गांठ बांध ली। उनके हृदय पर क्या बीती वह तो वही जाने। कौशल्या समझ गई कि इस संत को जीवित रखना हो तो उनकी इच्छानुसार करने देना चाहिए। राम तो अवधिपूर्ण होने पर आ जायेंगे पर इससे पहले यह चला जायगा! कहा, 'तू खुश रहे ऐसा कर।' फिर प्रसंग में नहीं है। उस समय शत्रुघ्न चुप है; मौन है। राजभवन का एक खंभा पकड़कर खड़े हैं। माँ उसके पास गई तो सिर माँ की छाती पर रख दिया! मौन की वेदना समझना मुश्किल है। उस दिन तलगाजरडा शत्रुघ्न को बुलाता है। सभी विद्वान, सर्जकों से दो-तीन कथाओं से कहता हूं प्लीज़! आपको अंदर से सूझे तो मेरे शत्रुघ्न को बुलाइए। उसे मुखर कीजिए। मानव का मौन मार डालता है! सभी ने कहा, वशिष्ठजी ने कहा, शत्रुघ्न, माँ को जवाब दे। शत्रुघ्न ने कहा, 'माँ, तेरे कहने से पूछता हूं। पिता स्वर्ग में, भगवान राम-लक्ष्मण-जानकी वन में, भाई भरत नंदिग्राम में तो तू बता, मैं कहां जाऊं? मेरे लिए कोई जगह नहीं?' माँ कहती है, बेटा, बता अपना कुल कौन-सा है? सूर्यकुल है तो सूर्य ठंडा होता है या उसे तपना ही पड़ता है? इस कुल में जन्मे हो तो तपना है। बड़े कुल में जन्मे हो तो टेक्स भरना ही पड़े। ज्यादा कमाई पर ज्यादा टेक्स भरना पड़े। बड़े कुल में जन्मे हो तो टेक्स भरना ही पड़े। ज्यादा कमाई पर ज्यादा टेक्स भरना पड़े। बड़े कुल में जन्मे को बहुत सहन करना पड़ता है। जगत की बहुत वाहवाह मिले ऐसे साधुपुरुषों को टेक्स भरना ही पड़ता है। दुनिया तो वाहवाह करती है। उसे वेदनाओं का पता नहीं चलता। नवाज़ देवबंदी का शे'र है -

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं है।

सत्य बोलने का मज़ा देख ले! जिधर तू है उधर कोई नहीं! पूरी सोसायटी तेरी विरुद्ध में है। यह सत्य का टेक्स चुकाना है।

श्री भरतजी नंदिग्राम में रहने लगे हैं। उनका तप, साधना, भजन देखकर बड़े-बड़े मुनि लज्जित होने लगे हैं। 'अयोध्याकांड' को पूरा करते तुलसी लिखते हैं, 'सीयाराममय प्रेम से पूर्ण भरत का जन्म न हुआ होता तो मुनियों के मन को अगम ऐसे नियम, व्रत कौन देता? भरत न होता तो इस कठिन कलियुग में मुझ जैसे को राम सन्मुख कौन करता?' 'रामचरित मानस' का द्वितीय सोपान 'अयोध्याकांड' अतिसंक्षेप में प्रभु के चरणों में समर्पित कर आज की कथा को विराम देता हूं।

राम रघुवंशी नहीं, रघुवंशमणि है

'मानस-रघुबंस', जो इस कथा का केन्द्रीय विचार है। गुरुकृपा से यथामति मैं आपके साथ वार्ता कर रहा हूं संवादी सूर के साथ। रघुवंश की महिमा बड़ी है। कवि कुलगुरु कालिदास, आदि कवि वाल्मीकि, और आख़िर मुझे आधार तो तुलसीदासजी को लेकर आप के साथ बातें करनी है। रघुवंश की लाक्षणिकताएं, उसमें रहे नैसर्गिक विनय का कालिदास वर्णन करते हैं। जब दिलीप ने रघु को युवराजपद दिया तब कालिदास कहते हैं कि मेरे रघु में स्वभाव और संस्कार से विवेक आया है; इसीलिए युवराजपद दिया है। कालिदास की दृष्टि से विवेक के दो केन्द्रबिंदु है। एक तो निसर्ग माने स्वभाव। पूरी परंपरा के स्वभाव में विनय हो तो ही आए। दूसरा, संस्कार में सत्संग हो या सुंदर साहित्य पढ़ने से, श्रवण करने से आदमी विनीत होता है। नैसर्गिक विनय और संस्कार द्वारा प्रगट विनय रघुवंशीओं का लक्षण होना चाहिए। जाते-जाते फ़िर कहता जाऊंगा कि रघुवंशी होने का गौरव लीजिए। पर रघुवंशी के लक्षण न हो तो रघुवंश में जन्म लिया हो तो भी लघुवंशी है। इसका स्वीकार होना चाहिए। साधुकुल में जन्मे पर सादगी न हो, भीतरी शांति न हो तो? उपाधि से न जुड़े पर समाधि से जुड़े। हमनें उपाधि की कंठी बांधी है। किसी समाधि की कंठी बांधना।

रघुवंशी का दूसरा लक्षण, जो बोले वो निभाए। बहुत कठिन है। रघुवंशी होने का आनंद अवश्य ले। कुल का गौरव होना चाहिए। पर वचन कभी न तोड़े। या तो बोलना ही नहीं। सौ बार सोचिए। मैं कथा या प्रोग्राम की तारीख दूं तब कहता हूं, यह नब्बे प्रतिशत हैं। बाकी दस प्रतिशत सेइफ़ रखता हूं। क्योंकि कभी पहुंच न पाउं तो वचनभंग हो जाय। गांधी क्यों विश्ववंद्य बनते हैं? क्योंकि वे वचन के विवेकी महात्मा थे। हम सब सूर्यसंतान है। इस नाते बोला हुआ निभाए। इसलिए नब्बे प्रतिशत कहता हूं। शायद तबियत की प्रतिकूलता के कारण न पहुंच पाउं। मैं एक बार कमीट कर दूं तो फिर नानुच न करूं। यजमान मुकर जाते हैं! कहे, बापू अनुकूलता नहीं है! बोले हुए को निभाना ये रघुवंशी का लक्षण है।

एक ओर लक्षण। समय अच्छा रहे या बुरा। रघुवंशी डरता नहीं है। काल माने मृत्यु नहीं। मृत्यु तो ध्रुव है फिर क्यों डरे? काल का अर्थ तलगाजरडा ऐसा करे कि जीवन में अच्छा-बुरा समय हो लेकिन रघुवंशी डरता नहीं। मुनाफा-नुकसान हुआ, कोई बात नहीं; कोई हर्ज नहीं। यह रघुवंशी का लक्षण है। नरसिंह मेहता कहते हैं-

सुखदु:ख मनमां न आणीए, घट साथे रे घडियां;
टाळ्यां ते कोईना नव टळे, रघुनाथना जडियां।

साहब, यह दुनिया तो आज हार पहनाए पर फिर राह देखे यह कब हार जाए? यह जगत है साहब! काल से क्या डरना? काल मानी यहां अच्छा-बुरा समय। तुलसीदासजी ने 'दोहावली' में लिखा हैं-

तुलसी असमय के सखा धीरज धरम बिबेक ।
साहित साहस सत्यब्रत राम भरोसो एक ।।

तुलसी कहते हैं, खराब समय में आपके सात मित्र है, उनका संग रखना। खराब समय आपको डरायेगा नहीं। ऐसे समय पहला सखा कौन? धीरज। यह समय निकल जायेगा। धीरज रखिए। दूसरा, धरम। सत्य, प्रेम, करुणा धर्म है। तीसरा, सत्संग से प्राप्त विवेक। यह साथ खड़ा रहता है। मित्र की तरह मदद करता है। चौथा, साहस। खराब समय में हमारा मित्र बनकर सहाय करे। धीरज रखे। ठीक निर्णय के बाद कूदिए। पांचवां, साहित्य। अच्छा साहित्य बुरे समय में सहाय करता है। कोई सुंदर लेख, अच्छी कविता, गज़ल, उपन्यास, कहानी, दोहा, छंद वो सब बुरे समय में सहाय करे। छठ्ठा, सत्यव्रत। जितनी मात्रा में सत्य का पालन करे वह हमें खराब समय में मदद करता है। आखिर राम का भरोसा। यह सात। रघुवंशी वह है जो खराब समय से डरता नहीं। तुलसीदासजी संसार को बड़ा रिपु मानते हैं। पूरा संसार चाहे विरुद्ध हो जाय फिर भी रघुवंशी डरता नहीं है। गुरुकृपा से पीछे नहीं हटता।

राम रघुवंशी नहीं है। अब आप कहेंगे कि आठ-आठ दिन रट लगाते रहे कि रघुवंशी है और जाते-जाते सब मिटा डाला कि राम रघुवंशी नहीं है! गज़ब है! विपरीत निवेदन है! राम रघुवंशी नहीं है। राम रघुवंशी नहीं है, नहीं है, नहीं है! तो राम क्या है? राम रघुवंशमणि है। दूसरा, राम सिर्फ़ रघुवंशी नहीं है। राम रघुवंश विभूषण है; रघुवंशनाथ है; रघुवंशमणि है। मणि का क्या काम है? सर्प की फेन पर जहां मणि होती है अंदर से सर्प के तलुए में उसी जगह विष रहता है। उस पर यह मणि रहती है। विष और मणि के बीच पतला पर्दा रहता है। फलत: सर्प के तलुए में भयंकर कालकूट विष है उसमें मणि ग्रहण नहीं करती। पर किसीको सर्पदंश हुआ हो और यदि मणि हाथ में आ जाय, सर्पदंश पर रखी जाय तो मणि के स्पर्श से सर्प का विष उतर जाता है। राम केवल रघुवंशी नहीं है। जिसे संसार का जहर नहीं चढ़ा है वह राम है। जो अमृतमय है। जिसकी वाणी अमृत; जिसके स्वभाव, आंख, कदम, हावभाव हर चेष्टा अमृतमयी है। तुलसी कहते हैं-

धन्यास्ते कृतिन: पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्।

उसका नाम अमृत, कथा अमृत, श्रवण अमृत, गायन अमृत है। हमें कभी गर्व आ जाय, हम में गौरव लेते-लेते गर्व आ जाय। समाज के दिए बडप्पन से थोड़ा जहर चढ़ जाए तब राम रघुवंशमणि ऐसे हैं जो जहर उतार देता है। हमें विषमुक्त कर असंग रहते हैं। इसीलिए राम रघुवंशमणि है। तुलसीदासजी ने 'रामायण' में राम को रघुवंशभूषण कहा है-

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं ।

राम रघुवंशी नहीं है; रघुवंश भूषण है। एक जगह कहा है-

रघुबंस बिभूषन दूसन हा ।
कृत भूप बिभीषन दीन रहा ।।

राम को भूषण-विभूषण कहा। क्यों? सीधा-सादा अर्थ है, राम रघुवंशी के भूषण है, अलंकार है, आभूषण है। शब्दकोश में आभूषण का अर्थ है जो गहना आदर उत्पन्न कराए। कई आभूषण ऐसे होते हैं जो आदर नहीं, नफ़रत उत्पन्न कराते हैं। जलारामबापा सबके हैं। लोहाणा समाज, रघुवंशी समाज यों कहे कि यह संत हमारे कुल का भूषण है। भाणसाहब रघुवंशकुल के आभूषण है। राम समस्त विश्व के आभूषण है। सूर्यकुलभूषण है। राम भानुवंश है। विभूषण का अर्थ है विशेष गहना; जो विशिष्ट और वरिष्ठ गहना है; जो सबसे श्रेष्ठ है। ऐसा भी अर्थ है कि विगत भूषण। एक भी गहना नहीं। इसकी एक शोभा है। शरीर पर कुछ भी नहीं है इसकी भी एक शोभा है। बेकल उत्साही के शब्द हैं-

सादगी शृंगार हो गई।
आइनों की हार हो गई।

आपकी सादकी आपका विभूषण है। भगवान राम भूषण धारण करे पर पिताजी के वचन से 'भूषन बसन'; भगवान राम ने त्याग दिया। वे विभूषण हुए। क्योंकि वल्कल विभूषण बने।

तो राम केवल रघुवंशी नहीं है; रघुवंश के भूषण है। राम रघुवंश के विभूषण है। राम रघुवंशमणि है। राम रघुवंशनाथ है। जिसके पास जाने से हमारा अनाथता का आवरण हट जाये। ये कोई विधि न करे। हम अकेलापन महसूस न करे। हमें लगे कि हमारा कोई है। जिसके स्मरण से हमारी अनाथता मिटे। जिसके दर्शन से, स्पर्श से, बातचीत से हमारी अनाथता मिट जाय तब समझना वे हमारे नाथ है। यहां नाथ का अर्थ मालिकी नहीं, एक महसूसी है। एक युवक का प्रश्न है, धर्मगुरु और सद्गुरु में क्या फ़र्क है? धर्मगुरु अभिप्राय दे, सद्गुरु अनुभव कराए। सद्गुरु अभिप्राय नहीं देता। वह अपना अनुभव कहता है। फिर भी जानता है कि यह है। मेरे गुरु की कृपा है। मेरे गुरु की करुणा है। सद्गुरु रणछोडदासबापू के पास कोई बीमार आशीर्वाद लेने जाय; वो संत तो यों ही कहे कि भाई, भगवान ठीक कर देगा। वह ठीक हो जाय। कोई बापू से कहे कि आपकी कृपा से ठीक हो गया। तब अभिमानमुक्त साधु कहे कि तू ठीक होनेवाला ही था पर भगवान मुझे यश दिलवाना चाहते थे। अत: मुझे निमित्त बनाया। साधु निमित्तमात्र होता है। उसमें नाथता नहीं होती। उसे पता है, उसका सामर्थ्य हरिकृपा से है। नाथ में अभिमान शून्यता होती है। वह हमें अनाथता का बोध नहीं होने देता।

राम रघुवंशी नहीं, रघुवंशनाथ है। आंख और वाणी से अमृत निकले, जिसके चेहरे से अनकहे भाव इतने आरपार निर्दोष हो ऐसे तत्त्व को नाथ कहने की तुलसी ने छूट दी है। हमें जिंदगीभर अनाथता महसूस न होने दे ये हमारा नाथ। राम नाथ है, मणि है, भूषण है, विभूषण है। राम क्या नहीं है? क्योंकि राम परमात्मा है;

भगवान है, ईश्वर है, ब्रह्म है। हमारे नाक में नकेल न डाले ऐसा नाथ है। हमें परवश न करे। हमें पूरी निजता-स्वतंत्रता दे वही हमारा सच्चा नाथ है। तथाकथित धर्मधुरंधर नकेल डाल देते हैं! मोहरा डाल दे या चश्मा चढा दे। हाँ, वह कहे ऐसा करना चाहिए। आज्ञांकित बन कर करना। गलत लगे तो मत करे। विनय से पांव छूकर कहना, यह अनुसरणलायक नहीं है। 'रामायण' में कहा है, जो आपको सत्य, प्रेम, करुणा से दूर ले जाय तो ऐसे गुरुवाक्य का पालन मत कीजिए। पर ऐसा नहीं करने देता। नहीं तो धंधा कैसे चले? पीठ पीठ रहे, मठ मठ रहे, धंधा न हो जाय। ये सब पैसे कमाने में पडे हैं! साधु-संत नई चेतना से सचेत है। अच्छा है। पहले भी जागृत थे। इसमें अपवाद भी है।

जो गुरु अपने शिष्य से कहे, यह ब्रह्मचारी आया है ये तेरा सब लूट लेगा। दानसंकल्प मत करना। ऐसे गुरुवचन बलि राजा ने नहीं माने। वामन आया। बलि जान न पाया। गुरु ने पहचान लिया। फिर भी प्रपंच किया! कई गुरु ब्रह्म है ऐसा जानकर भी अपने हित छोड़ते नहीं! आश्रित से कहा, खबरदार! संकल्प मत करना। गुरु नहीं चाहता कि उसका चेला अन्य को दे। यही तकलीफ़ है! मुझे ही मिलना चाहिए! यह तो फावडा मारकर नहर का सभी पानी लेने जैसा है! साहसी साधु को यह संशोधन करना होगा। नहीं तो तलगाजरडा तो है ही! मैं समझता हूं, यह साहस है। अपने हित का ध्यान रखते हुए गलत अर्थघटन किया है। गलत मूल्यों की स्थापना की है। मंदिर के पाटोत्सव की तरह सूत्रों के पाटोत्सव भी होने चाहिए। नई आरती होनी चाहिए। पांच हजार साल पहले का दर्शन प्रासंगिक भी हो। थोड़ा सुधार करे तो दर्शन देनेवालों को भी अच्छा लगे। पीठ थपथपा शाबासी देंगे, तुने सुधार किया; अच्छा किया। पर साहस जरूरी है।

तो 'रामचरित मानस' को केन्द्र में रखकर रघुवंश लाक्षणिक्ताएं, रघुवंश का स्वभाव, रघुवंश के मूल्यों की बातें संवादी सूर में करते हैं। आज विराम का दिन है। थोड़ा समय जो है उसमें पांच कांडों की जो कथा है उसे संक्षेप में लूं। फिर विराम लें। कल भरत के प्रेम और त्याग की कथा हमनें गाई। 'अयोध्याकांड' पूरा हुआ।

'अरण्यकांड' आरंभ हुआ। छोटा-सा है। इसके आरंभ में राम-लक्ष्मण-जानकी चित्रकूट में निवास के बाद स्थळांतर करते यात्रा का आरंभ करते हैं। अत्रि के आश्रम में पधारे। अत्रि ने स्तुति की। मेरा मनोरथ है, 'रामायण' की सारी स्तुति पर स्वतंत्र कथा करनी है। अत्रि ने स्तुति की-

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

आप मेरे अपने हैं इसलिए आपके पास क्या छिपाना? मैं छोटा था तब रेल्वे लाईन पर चड्डी पहन यह स्तुति बहुत गाई है। पचपच साल पहले की बात है। 'रामायण' का वक्तव्य दूं इसका आनंद अवश्य है। पर गाने का बहुत आनंद है। मेरी शुरूआत गाने से हुई। दादा का राग याद कर लूं। एक चौपाई कहूं। दादा कहते थे, मुश्किल आए तो यह चौपाई गाना। फिर भी तकलीफ़ दूर न होतो हरि को दोष मत लेना। क्योंकि ये तेरे कल्याण के लिए हो सकती है। वह चौपाई थी -

दीन दयाल बिरिदु संभारी ।
हरहु नाथ मम संकट भारी ।।

यह दादा की मूल तर्ज थी। इस रीति से मैंने यह स्तुति बहुत गाई है। अत्रि ने भगवान की स्तुति की। प्रेम वरदान की प्राप्ति है। सरभंग, सुतीक्ष्ण, महर्षि, कुंभज इन सभी महापुरुषों को मिलते-मिलते भगवान कुंभज की स्वीकृति लेकर दंडकारण्य में पंचवटी में गोदावरी तट पर आने का निर्णय लिया है। रास्ते में जटायु मिले। प्रभु ने मैत्री की।

गोदावरी के निकट पंचवटी में, पर्णकुटि में, निवास करते हैं। लक्ष्मणजी भगवान राम से पांच प्रश्न पूछते हैं। भगवान जवाब देते हैं। साधक की विशेष जागृति अपेक्षित थी। क्योंकि शूर्पणखा का आगमन होनेवाला है। फिर शूर्पणखा आती है, दंडित होती है। भगवान राम खर-दूषण का निर्वाण देने तैयार हुए। तब रघुवंश के स्वभाव की बात हुई-

हम छत्री मृगया बन करहीं ।

प्रभु चौदह हजार को निर्वाण देते हैं। शूर्पणखा रावण को उत्तेजित करती है। रावण ने योजना की है। सुवर्ण मृग बनकर मारीच आता है। रावण योजना बनाये इससे पहले रामजी ने कर ली है। सीताजी अग्नि में समा गई। प्रतिबिंब रखा है। रावण मारीच को लेकर आता है। सीता का अपहरण होता है। मानवलीला करते-करते राम सीता के वियोग में रोते-रोते खोज करते हैं। जटायु शहीद होता है। जटायु का संस्कार रामजी ने किया। सारूप्यमुक्ति मिली। यहां से भगवान आगे बढ़े। कबंध राक्षस को गति दी। भगवान शबरी के आश्रम में पधारे हैं। गुरुवचन पर भरोसा रख बैठी वंचित, उपेक्षित, तिरस्कृत समाज की महिला को गुरु ने कहा था, तेरे द्वार राम आयेंगे। गुरुवचन याद करते शबरी खुश हुई। भगवान ने क्रांतिकारी कदम उठाते कहा, मैं, जाति, पाति, कुल, धरम के विभागों में नहीं मानता। राम कहते हैं, मैं एक ही नाता मानता हूं-

मानउँ एक भगति कर नाता ।

आपमें नवधा भक्ति है। जगत को दिखाने आपको निमित्त बनाकर मैं आपको नौ प्रकार की भक्ति कहूं।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।।

नवधा भक्ति गाई। शबरीजी योगअग्नि में देह को विलीन कर सिधारी है। भगवान पंपा सरोवर आए। नारदजी मिले। भगवान आगे की यात्रा करते हैं। 'अरण्यकांड' पूरा होता है।

'किष्किंधाकांड' के आरंभ में हनुमानजी का प्रवेश है। वे ब्राह्मण के रूप में आए हैं। वे जान गए कि ये तो मेरे मालिक है। एक बात समाज समजे प्लीझ! हनुमानजी राम के पास आए तब पैर नहीं पडे हैं; दंडवत् नहीं किया है। ये परमात्मा है ऐसा भरोसा हुआ तब पैर पड़े। हम अंधविश्वास कर पैर पकड लेते हैं! बाद में गलती लगे तो वही पैर खींच पछाड़ते है! बुद्धपुरुष को पाने में थोड़ा समय लगेगा। उनको जानिए-समझिए। हर क्षेत्र में स्वभाव देखना। प्रभाव देखकर दूर रहना। साधु तो स्वभाव से जाना जाय, प्रभाव से नहीं। स्वभाव जागृति है, प्रभाव मेकअप है। स्वभाव असलियत है। हनुमानजी ने राम के पैर पकड़े फिर कभी छोड़े नहीं। हनुमानजी ने राम को सुग्रीव का परिचय दिया। भगवान ने बालि निर्वाण कर अंगद को युवराजपद दिया। सुग्रीव को राजगद्दी दी। प्रभु चातुर्मास करने प्रवर्षण पर्वत पर गए। चातुर्मास पूरा हुआ। सुग्रीव राजभोग में प्रभुकार्य भूल गया। लक्ष्मण को भेज कर सुग्रीव को मोह निद्रा से जगाया। सुग्रीव डरता-डरता शरण में आया। प्रभु ने सीताखोज अभियान के लिए कहा। भालू-बंदर तीन दिशाओं में भेजे गए। मुख्य सेवकगण को दक्षिण में भक्ति की, सीता की खोज हेतु भेजे। जिसके मार्गदर्शक जामवंतजी है। उत्साही हनुमान भी है। नायक युवराज अंगद है। कहीं से भी पता नहीं मिलता। जंगल में सभी प्यासे हुए। सभी स्वयंप्रभा नामक तपस्विनी के पास जाकर जलपान करते हैं। उन्होंने मार्गदर्शन दिया। आप आंखें बंद करें, मैं सीता तक पहुंचा दूं। सभी ने आंख बंद की। पर लगा क्या पहुंच गए? और आंखें खोल दी। आंखें खोली तो समुद्र तट पहुंच गए। यदि बंद रखते तो पहुंच जाते। हमारी तकलीफ़ यही है। हम बहिर्मुख है। इसीलिए

बीच राह रह जाते हैं। जो अखंड अंतर्मुख है उनसे जानकी कहां दूर है?

भाण कहे भटकीश मा, मथी जोने मांय,
समजीने तुं सूई रहे, तो करवानुं नथी कांय।

अंतर्मुखतां तो स्वाभाविक छलकती है और जानकी तक पहुंचा देती है। अवधि पूरी होने में है। संपाति नामक गीध कहता है, जानकी अशोकवाटिका में है। जो समुद्र पार जाय वह कार्य कर सकेगा। जामवंत ने कहा, हनुमान, तू चुप क्यों है? काम तो तुम्हें करना है। रामकार्य के लिए तुम्हारा विग्रह है। हनुमानजी पर्वताकार हुए। जामवंतजी से कहा, मैं जाउं पर कहीं भूल कर बैठूं। आपके अनुभव से सीख दीजिए कि मुझे लंका जाकर क्या करना है? युवकों को अनुभवियों से आशीर्वाद लेकर काम करना चाहिए। 'रामायण' ने ऐसी शिक्षा-दीक्षा दी है। हनुमानजी की जाने की तैयारी के साथ 'किष्किंधाकांड' पूरा होता है। गोस्वामी 'सुंदरकांड' के आरंभ में लिखते हैं-

जामवंत के बचन सुहाए ।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए ।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई ।
सहि दुख कंद मूल फल खाई ।।

समुद्र तट पर स्थित एक सुंदर पर्वत पर हनुमानजी चढ़े हैं। मित्रों ने जयजयकार किया। पर्वत पर से झुककर प्रणाम किया।

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

- ज़हूर आलम

जो ऊंचाई दूसरों को अपने से नीचा दिखाएं ऐसी ऊंचाई नहीं चाहिए। हमें ऐसा लगे कि हम उपर चढ़ गए तो सब छोटे लेग। पर घाटीवालों से पूछिये तो पता चले कि जो हमारे साथ था वो ठींगना हो गया! अहंकार से चढ़ते हैं वे अपने आप छोटे हो जाते हैं। हनुमानजी विघ्नों को पार करते लंका प्रवेश करते हैं। पूरी लंका राक्षसों की है पर एक वैष्णव मिल गया। विभीषण-हनुमानजी मिलते हैं। दो संतों का मिलन हुआ। एक संत दूसरे संत को युक्ति बताता है। हनुमानजी महाराज अशोकवाटिका में प्रवेश करते हैं। वृक्ष की घटा में हनुमानजी छिप गए हैं। उस समय रावण मंदोदरी आदि रानियों के साथ आया है। प्रलोभन देता है। जब जानकीजी बहुत दु:खी हुई तब हनुमानजी रामनाम मुद्रिका फेंकते हैं। जानकीजी ने चकित मन से मुद्रिका देखी, यह तो मेरी है! यह यहां कहां से आई? जानकीजी बहुत दु:खी हुई। हनुमानजी राम गुणगान गाने लगे। गुणगान सुनते ही सीता का दु:ख भाग गया। हनुमानजी को आशीर्वाद दिया। हनुमानजी ने मधुर फल खाये। हनुमानजी को रोकने राक्षस आए। पर वे सब मोक्ष को गए। दो-तीन भाग निकले! लंका दरबार में गए। कहा, हे लंकेश, महाराजाधिराज, एक बंदर आया है। अशोकवाटिका तहसनहस कर डाली हैं! रावण अक्षय को भेजता है। हनुमानजी के एक ही प्रहार से अक्षय का क्षय हो गया! रावण को जानकारी मिली। इन्द्रजित खड़ा हो गया, 'देखता हूं, कौन है?' 'पुत्र, उस बंदर को मारना नहीं। बंदी बना ले आना।' इन्द्रजित भयानक युद्ध

धर्म बहुत संशोधन मांगता है। साहसी साधुओं को यह सब करना पड़ेगा। नहीं तो तलगाजरडा तो है ही! मैं समझता हूं, यह सब साहस है। हमारे हित हेतु हमने गलत अर्थघटन किए हैं! गलत मूल्यों की स्थापना की है! उसका जीर्णोद्धार होना चाहिए। मंदिर में प्रतिवर्ष पाटोत्सव होते हैं यों सूत्रों के भी हर बार पटोत्सव होने चाहिए। नई-नई आरती उतारनी चाहिए। पांच हजार साल पहले का दर्शन आज प्रासंगिक न भी लगे। उस समय के दर्शन में सुधार करें तो दर्शन देनेवाले को बुरा न लगे। पर इसके लिए साहस अत्यंत जरूरी है।

कर बन्दी बनाकर ले आता है। रावण की सभा देखकर वे खुश होते हैं। सच्चा सद्गुरु शिष्य का वैभव देख खुश होता है। वे जलन न करे पर संकेत दे कि तेरा तमोगुणु अभिमान छोड़ दे।

श्री हनुमानजी ने विभीषण के घर को छोड़कर लंकादहन किया। हनुमानजी माँ के पास आए। प्रभु को जानकारी दी। पूरा समाज समुद्र तट पर रुका है। विभीषण ने रावण को सच्ची समझ दी। रावण ने संत का त्याग किया। विभीषण मंत्रीयों को लेकर राम की शरण आया है। भगवान ने बल प्रयोग की बात की। पूछा, समुद्र कैसे पार करेंगे? विभीषण ने कहा, आपके कुल में समुद्र महान है। आप तीन दिन व्रत कीजिए। भगवान तीन दिन बैठे। समुद्र ने मार्ग न देने पर बलप्रयोग की बात की तब समुद्र ब्राह्मण रूप में आया। कहा, आप सेतु बनाइए। प्रभु को जोड़ने की बात पसंद आई है। 'रामायण' का विचार जोड़ना है, तोड़ना तहीं। 'सुन्दकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध बना है। रामजी ने कहा, 'यह उत्तम धरणी है। यहां शिवजी की स्थापना करनी है।' ऋषिमुनि आए। शिवलिंग प्राणप्रतिष्ठा हुई। शिव और वैष्णवों को ऐक्य दिया। भगवान की सेना ने सुबेल पर्वत पर पडाव डाला है। रावण मनोरंजन हेतु अखाडे में आया। प्रभु ने महारस भंग किया। दूसरे दिन सुबह अंगद संधि के लिए गया। रावण नहीं माना। युद्ध अनिवार्य बना। धमासाण युद्ध हुआ। प्रभु ने इकत्तीसवां बाण रावण की नाभि में मारा। रावण को वीरगति प्राप्त हुई। रावण का तेज प्रभु में समा गया। विभीषण ने रावण का संस्कार किया। विभीषण को राजतिलक हुआ। जानकीजी ने प्रतिबिंब पुनः अग्नि में रखा और मूल जानकी प्रगट हुई। रामजी ने हनुमानजी से कहा, अयोध्या जाकर भरत को ख़बर दीजिए कि प्रभु आ रहे हैं। प्रभु ने हवाईजहाज से जानकी को लंकादर्शन करवाया। कुंभज आदि महात्माओं से मिले। प्रभु का हवाईजहाज शृंगबेरपुर उतरा। प्रभु ने केवट से कहा, तेरी उतराई क्या दूं? केवट ने कहा, प्रभु वह तो बहाना था। यदि आपको उतराई देनी है तो मैंने आपको नौका में बैठक दी, आप मुझे जहाज में बिठाए। प्रभु ने साथ लिया। 'लंकाकांड' समाप्त।

'उत्तरकांड' में अवधि का एक दिन बाकी है। पूरी अयोध्या प्राण छोड़ने की तैयारी में है इतने में हनुमानजी आते हैं। भरतजी को खबर दी। हनुमानजी ने आकर रामजी से कहा, अब विलंब न करे। प्रभु अयोध्या पहुंचे। भरत-राम मिलाप हुआ। प्रत्येक व्यक्ति का आत्मसाक्षात्कार सफल हुआ। कैकेयी पहले, फिर सुमित्रा, कौशल्या से मिले। वशिष्ठजी ने ब्राह्मण देवताओं से कहा कि आज ही राजतिलक करे। अब कल पर भरोसा न रखे। दिव्य सिंहासन मंगाया। सत्ता सत् के पास आई। रामजी ने पृथ्वी को प्रणाम किया। सूर्य, दिशाएं, गुरु, ब्राह्मण, माँ, प्रजा को प्रणाम कर राघव गद्दी पर बैठे। वशिष्ठजी ने प्रेमराज्य सोंपकर राजतिलक किया। छः महिने के बाद प्रभु ने मित्रों को बिदाई दी। हनुमानजी रुक गए। समयमर्यादा पूरी होने पर जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। तीनों भाईयों के यहां दो-दो पुत्र जन्मे। रघुवंश के वारिस का नाम बताकर तुलसी ने कथा को विराम दिया। जानकी का दूसरा वनवास जो सगर्भा स्थिति में हुआ। इस विवाद-दुर्वाद का प्रसंग तुलसीजी संवाद के शास्त्र में लाना नहीं चाहते। तुलसी की मानसिकता है कि राम प्रत्येक हृदय में निवास करे। रामराज्य का वर्णन है। फ़िर बाबा भुशुंडिजी का चरित्र है। गरुडजी उन्हें सात प्रश्न पूछते हैं। उसके जवाब दिए जाते हैं। आख़िर में गरुड गद्गद् होकर वैकुंठ की ओर गति करते हैं।

शिव ने कथा को विराम दिया। गंगा, यमुना, सरस्वती तट पर याज्ञवल्क्य कथा कहते थे। उन्होंने भरद्वाजजी के सामने विराम दिया या नहीं यह प्रगट नहीं है। आखिर कलिपावनावतार तुलसीजी कथा विराम करते हैं। तुलसी तीन सूत्र देते हैं। 'रामहि सुमिरिअ' पहला सूत्र; 'गाइअ रामहि', दूसरा सूत्र; और तीसरा सूत्र, 'संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।' इस कलियुग में हम और कुछ न कर सके बाप! जो कर सके उन्हें प्रणाम। हम योग, व्रत, यज्ञ न कर सके। हमें क्या करना है? राम का स्मरण, राम को गाना, राम को सुनना। किसीकी स्मृति में रहना यह सत्य है। सुमिरन माने सत्य। गाना माने प्रेम पर करुणा के बिना राम को सुनना संभव नहीं है। व्यासपीठ का निचोड सत्य, प्रेम, करुणा है। तुलसी कहते हैं, आज मुझ जैसा मतिमंद परमविश्राम को प्राप्त कर गया है। आखिर में भी उन्हें रघुवंशमणि याद आते हैं-

मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर ।
अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर ।।

तुलसी ने भी रामकथा को विराम दिया। शिव, भुशुंडि, याज्ञवल्क्य, तुलसी चारों परमाचार्यों ने कथा को विराम दिया। इन परमाचार्यों की कृपाध्यक्षता में बैठकर नौ दिन तक भाणतीर्थ में भाणसाहब की चेतन समाधि के इस आंगन में हमने नौ दिनों की कथा की। प्रेमयज्ञ शुरू हुआ था। व्यासपीठ विराम देने जा रही है तब अंत में थोड़े शब्द कहूं। बाप! अस्तित्व के योग से कथा हुई। उसीकी कृपा से बाधामुक्त रीति से कथा को विराम दूं। ऐसे अवसर पर सब कह दिया रघुवंश के बारे में फिर भी कितना रह गया! यह मेरी कायम की अनुभूति है। परंतु युवा भाईयों-बहनों, आपके स्वभाव, रुचि को अनुकूल हो ऐसे कोई 'मानस' सूत्र पहुंचा हो, पसंद हो तो पकड़ रखना। जीवन में दुःख के समय काम आएगा। रवि-भाण संप्रदाय की परंपरा का मनोरथ मूर्त करना था तो भगवद्कृपा, समाधिवालों की कृपा से मनोरथ पूरा हुआ सो मैं पूरी परंपरा को प्रणाम करता हूं। सारे संत निरंतर हाजिरी देते थे। हमें शक्ति देते थे। ऐसे सभी संतों को प्रणाम करता हूं। मुख्य एवं सभी यजमानों; सेवा देनेवाले छोटे से छोटे आदमी; यह कथा सबकी थी। सब को आशीर्वाद तो न दे सकूं पर प्रार्थना कर सकूं आपके वंश में भक्ति कायम रहे। सत्य के निकट रहे। परस्पर प्रेम करना। पूरे जगत पर करुणा बरसाना। संपूर्ण आयेजन प्रति संतुष्टि व्यक्त करता हूं।

यह सबको जोडने की कथा है। यहां मुस्लिम सेवा देता है। रामनामी रखी थी। उसने कहा, बापू, गांव में शिवमंदिर बनाना है। राम ने रामेश्वर स्थापित किए यह कथा में है। यह लडका स्थापित करे इतिहास का एक दूसरा अध्याय शुरू होता है। मैंने कहा, हनुमान से प्रार्थना करूं तेरा मनोरथ पूर्ण हो। उसने मुझे कहा, 'आपको आना पड़ेगा।' फिर उसने जो मनोभाव कहा, आपको नहीं कहूंगा। शायद उनके धर्म के लोगों को पसंद न आए। बाकी उसकी निष्ठा, मोहब्बत, एहसास को सलाम करता हूं। उसने कहा, 'मैं जितनी बार कथा में आया हूं मेरे लिए यात्रा बनी है।' क्या हम विभाजन के लिए बैठे हैं? यह एकता का यज्ञ है। यह प्रेमयज्ञ है। जिगर मुरादाबादी के शे'र के साथ विराम की ओर चलूं -

उनका फ़र्ज़ क्या एहले-सियासत जाने ।
मेरा पैगाम मुहब्बत है, जहां तक पहुंचे ।

यह महोब्बत का सेतु है। सभी प्रेम से जुड़े हैं। धर्म, जाति, वर्ण, कौम, भाषा का कोई भेद नहीं है। इस विस्तार के ऐसे सेतुबंध को प्रणाम करता हूं। तलगाजरडा आने का सबको निमंत्रण देता हूं। अब यह फल अर्पण करें। भाणसाहब की पूरी फ़ौज, परंपरा की चेतना को साथ में रखकर, आप सबको साथ में रखकर व्यासपीठ नौ दिनों का रामकथा-'मानस-रघुबंस' का सुक्रित इकठ्ठा हुआ है यह भाणसाहब की समाधि को अर्पण करें, बाप! तेरे चरणों में तेरा तुझे अर्पण करते हैं!

मानस-मुशायरा

उनका क़र्ज़ क्या एहले-सियासत जाने।
मेरा पैगाम मुहब्बत है, जहां तक पहुंचे।
– जिगर मुरादाबादी

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।
– ज़हूर आलम

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं है।
– नवाज़ देवबंदी

कभी तो वस्ल कभी हिज्र मार देता है।
नहीं है कुछ तो तेरा ज़िक्र मार देता है।
– राज कौशिक

सादगी शृंगार हो गई।
आइनों की हार हो गई।
– बेकल उत्साही

नज़र ने नज़र से मुलाकात कर ली।
रहे दोनों खामोश और बात कर ली।

•

मैं तुझे देखूं तू मुझे देख।
देखते-देखते ही जाए एक।

•

आग तो अपने ही लगाते हैं।
गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

क्वचिदन्यतोऽपि

मेरा सबसे बड़ा सदाव्रत रामकथा है

ध्यानस्वामीबापा अवोर्ड-अर्पण समारोह में मोरारिबापू का प्रेरक उद्‌बोधन

जिनकी करुणाछाया में हमें प्रसन्नता मिले ऐसा कार्य हो रहा है, ऐसे पूज्य ध्यानस्वामीबापा की समाधि को प्रणाम कर साथ ही साथ सौराष्ट्र-कच्छ-गुजरात के तमाम धर्मस्थानों में जो-जो समाधियां है उन सबको प्रणाम कर इस उत्सव पर जिन्हें वंदना करते हैं ऐसे पूज्य मेकरणदादा, ध्रंग अखाडे के स्थान को मेरा प्रणाम। पूजनीय निर्मलाबा, ध्यानस्वामीबापा ट्रस्ट के प्रमुख पूज्य वसंतबापू, कच्छ से पधारे पूज्य दिलीपराजाबापू, सभी कार्यक्रम में जिनकी कृपाहाजिरी रहती है ऐसे सायला के महंतश्री दुर्गादासबापू, गारियाधार से पधारे पूज्य वजुबापू। उपस्थित सभी संत, महंत, सभी महापुरुषों को प्रणाम। ध्यानस्वामीबापा ट्रस्ट के हमारे सभी पूज्य ट्रस्टीगण; चौबीस घंटे सेवारत पूज्य छगनबापू, उनके साथ सेंजल के दरबारश्री के प्रतिनिधिगण, सेवारत गांव के भाईयों-बहनों, सबका स्मरण करता हूं। तैतीस नवदंपती जिन्होंने आज गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया उनको दादा का आशीर्वाद प्राप्त हो। दोनों पक्ष के साधु-समाज के पूजनीय बुझर्ग। उपाधि तो हमें कुछ न कुछ रहती है। आज कितना आनंद है कि एक समाधि से दूसरी समाधि मिलने आई है। आज उपाधि से उपाधि मिलने नहीं आई है। और ये कुशलक्षेम पूछने नहीं आई। इन समाधियों को कायम कुशलक्षेम है। ध्यानस्वामीबापा की समाधि को मेकरण दादा की समाधि पूछती है, भजन कैसा चल रहा है? त्याग, वैराग्य कैसा है? कच्छ से एक

समाधि पृच्छा करने आई है। किसने कहा, समाधि में बैठे या सोये हैं वह खडे नहीं हो जाते? खबर पूछने आप ध्रंग से पधारे बापू को प्रणाम। जीनाम। मैं प्रसन्न हूं। संतों के पास विचार व्यक्त करने का अवसर मिले, उनके आशीर्वाद मिले और हमारे विचार उन्हें सच्चे लगे तो हमें विशेष बल मिले। विचार दृढ़ बने। फिर इन विचारों को हम आचरण में रखते आनंद का अनुभव करे।

बाप! तलगाजरडा को ऐसा समझ में आया है कि समाधि के नौ प्रकार है। इसका विस्तारपूर्वक दर्शन कर आपके चरणों में बात रखता हूं। 'रामचरित मानस' का आधार लूंगा और थोड़ी समाधि उसमें से लूंगा। थोड़ी ग्रामीण जगहों से लूंगा। एकाद योगसूत्र से लूंगा। समाधिस्थान में खडे होकर सभी समाधियों की वंदना करनी है। तो समाधि के नौ प्रकार है। सार-संक्षेप भी कर सके। पर मैं पूर्णांक में बात करूंगा। नौ का अंक पूर्णांक है। नौ खंडों में धरती बंटी है। नौ ग्रहों से प्रकाश पाते हैं। रामकथा नौ दिनों की होती है। मेकरणदादा और इन समाधियों के साथ कितनी परंपराएं जुड़ी है! उसमें नाथ भी नौ है। नौ नाथ की परंपरा है। समाधि स्थान में नौ समाधि की बात आपके चरणों में रखने की स्फूरण होती है। 'रामचरित मानस' में तीन समाधि की बात है। 'समाधि' शब्द तो बार-बार आया है। एक तो -

सहज बिमल मन लागी समाधि।

नारद के बारे में लिखा है। जिसे सहज समाधि कहते हैं। और पूरी चेतना की धूलि कबीर तक पहुंचती है। नारद से कबीर तक सहज समाधि की बात आती है। तुलसी कहते हैं-

सुमिरत हरिहि श्राप गति बाधी।

नारद को शाप था कि आप एक जगह स्थिर नहीं रह सकेंगे। लेकिन बद्रिकाश्रम में हरि का स्मरण करते शाप की गति बाहर खड़ी रह गई और-

सहज बिमल मन लागी समाधि।

नारद को सहज समाधि लगी। सहज समाधि का मतलब जिसे कामदेव कुछ न कर सके वह सहज समाधि है। शिवसमाधि तोड़ सके, उसमें क्षोभ कर सके पर सहज समाधि को कुछ न कर सके। इसलिए कबीर कहते हैं-

साधो सहज समाधि भली।

सहज समाधि की पूरी परंपरा नारद से कबीर तक गई। अन्य जगह भी पहुंची। तो एक सहज समाधि। दूसरी शिवसमाधि, शंभुसमाधि।

तजी समाधि संभु अबिनासी।

भगवान शिव की समाधि। इसमें विक्षेप हुआ।

भयउ ईस मन छोभु बिसेषी।

जीव समाधि ले तब काफ़ी मुश्किलें आती हैं। कामदेव ने शिव को थोड़ा क्षोभ करवाया है। यह शिव समाधि है। तीसरा, अखंड समाधि का उल्लेख 'रामायण' में हैं-

संकर सहज सरूपु सम्हारा।
लागि समाधि अखंड अपारा।।

अखंड समाधि टूटती नहीं। समाधिस्थ व्यक्ति को इच्छा हो कि मुझे घूमने निकलना है तो निकलता है। बाकी कामदेव के बाप की भी ताकत नहीं, न तो जगत के किसी अवरोध की ताकत है कि क्षोभ करा सके। ऐसी अखंड समाधि। ये तो सत्तासी हजार वर्ष बाद शिव को ऐसा लगा कि जरा बाहर घूम आऊं।

तजी समाधि संभु अबिनासि।

अखंड समाधि से बाहर निकले। बापू, मुझे 'सदाव्रत' शब्द बहुत पसंद है। कोई भी व्रत की समयावधि होती है। एकादशी का व्रत चौबीस कलाक का है। सावन का मौनव्रत एक माह तक है। भाद्रपद सुद एकम को किसीके पैर छूकर बोलते हैं। कोई भी व्रत को सीमा है। व्रत के

बाद आहार लिया जाता है। ग्रामीण जगह में सुंदर शब्द खोजा, 'सदाव्रत।' जिसकी कोई समयावधि नहीं है। कभी किसी ने कहा कि हमारे यहां आज सेवा-अन्नक्षेत्र बंद है? ऐसा न कर सके। साहब, विचार बंद नहीं होता। अपनी अंतर्मुखता कभी यह सब करवा देती है। गंगासती ने कहा है-

अभ्यास जाग्या पछी बहु भटकवुं नहीं पानबाई...

ऐसा भी संभव है कि साधक ज्यादा अंतर्मुख हो तो बाह्य प्रवृत्ति भी बंद हो जाती है। लेकिन मुझे सदाव्रत बहुत पसंद आये। वहां बैठा साधु, समाधियां, समाधिपुरुषों ने रोटी का सदाव्रत किया। पारण न हो। उनकी सेवा, गौसेवा इसका पारण नहीं होता। उनके निदान केम्प और वर्तमान काल में जो-जो सेवाएं होती है इसका कोई पारण नहीं है। ये अखंड चलते हैं। आप सबके आशीर्वाद से, 'रामायण'कृपा से, गुरु की समाधिओं की कृपा से पूरी दुनिया घूमा हूं। पूरे जगत में कहता हूं कि सौराष्ट्र-कच्छ जैसे स्थान नहीं देख पाओगे। वेटिकन गया हूं। ये साम्राज्य है, सदाव्रत नहीं। जेरुसलेम गया हूं। ये साम्राज्य है, सदाव्रत नहीं। वहां तो हिसाब-किताब होता है! कल मैं पाळियाद से आ रहा हूं, साहब! कौन हिसाब-किताब करेगा? सबका स्वीकार है। ये सभी स्थान मुझे पसंद है क्योंकि 'सदाव्रत' शब्द अद्‌भुत है। जिसके व्रत में कभी अंत नहीं। खो-खो खेल जैसा हैं। एक खो दे फिर दूसरा बैठ जाय। मेकरणदादा ने खो दी; आज बोटादबापू बैठे हैं। यूं ही चलता रहे।

दिलीपराजाबापू का वक्तव्य पसंद आया कि हम एक मोबाईल सदाव्रत शुरू कर रहे हैं। गधा और कुत्ता सूफी और साधु परंपरा से काफी समय से जुड़े हैं। मेकरणदादा ऊंट पर बैठकर रोटियां रण में दे सकते थे पर ऊंट की जगह गधा और कुत्ता पसंद किया। कुत्ता लगभग हमारी समाधियों से जुड़ा है। साधु परंपरा में हमारे यहां गलराम की समाधि है। कई जगह कुत्ते पहले ही कूदकर समाधि में बैठ गए है। पशुओं ने समाधि ली है ऐसे दृष्टांत भी है। घोडाओं ने समाधि ली है। समस्त सूफी परंपरा; अपने यहां ऐसा ही विस्तार हुआ अत: गधा उपयोग में आया। और बाद में अंधश्रद्धा में सूफी न रहे पर गधे पूज्य हो गए! सूफी तो निकल गया। फिर किसी ने गधे को दफना दिया। फिर कितने ही साम्राज्यों का उस पर निर्माण हुआ है! किसीको पता भी नहीं, इसमें मूल पुरुष तो वो ही है! गधे और कुत्ते द्वारा जो सूफी परंपरा और सौराष्ट्र की हमारी साधु परंपरा का एक समन्वय है। सेतु बना है।

सदाव्रत बड़ी अद्‌भुत बात है। आज जहां सदाव्रत, अन्नक्षेत्र है भले उसमें ए.सी. नहीं है पर पंखें तो है। सब पंखे की हवा में भोजन करते हैं। हम ए.सी. में करते हैं। मेकरणदादा के पांव छूता हूं। वे धन्य है! वहां जाकर खिलाता है। उसे कोई पहुंच न पाए साहब! तपती धूप में! जीनाम मंत्र क्या है? सभी में जी; हाजी। ना नहीं। स्थानों में स्वीकार का ही मंत्र था। ऐसा एक पवित्र शब्द 'सदाव्रत' आया। और विचार आया कि सदाव्रत की वंदना करे। तो सहज समाधि; शिव समाधि; अखंड समाधि है।

लागि समाधि अखंड अपारा।

'मानस' में तीन समाधियों के नाम है। चौथी ज्योति समाधि है। समाधि पर कई बार दीये जलाए जाते हैं। बापू, मैं खास पढ़ा नहीं। मेट्रिक में तीन बार फेइल हुआ हूं! पर मैं अंधश्रद्धालु नहीं हूं। जिस कुल में जन्मा हूं उसमें अंधश्रद्धा है ही नहीं। रेशनालिस्ट हमारा अभ्यास करे तो कहना पड़े कि तलगाजरडा रेशनालिज़म विचारधारा में

मानता है। मैं जब शाहपुर में पढ़ रहा था। फिल्म देखने का शौक था। जूनागढ में 'हिमालय की गोद में' लगी थी। मैं देखने जाउं तो जाने के बस के पैसे हो पर लौटने के लिए न हो! भगवद्गुरु आश्रम में ओमकारनाथ बापू बैठते थे। भूख लगने पर वहां रोटी खा ले। फिर पैदल लौटना पड़े। सुबह क्लास एटेन्ड करना होता। मैं अकेला शाहपुर से जूनागढ पैदल चलूं। सहज है, ऐसे कुल में प्रभु ने जन्म दिया है तो भजन तो श्वास के साथ जुड़ा है। हरिनाम तो आहार है। मन में प्रभु का जो नाम आए लेता जाउं, चलता जाउं। आपके आशीर्वाद से डर न लगे। १९६५ में मेरी उम्र अनुसार मेरी आंखें दूर तक देख सकती थी। इतनी दूर मैंने दीया देखा, बापू! यह एक नहीं, तीन अनुभव थे। फिर दो महिने के बाद फिल्म देखने जाउं। फिर तो पैसे होने पर भी पैदल चलूं। वहां से निकलूं, दीया दिखाई दे! तीन बार देखा पर मन माने नहीं! एक बार कणबी पटेलभाई साथ में थे। तलाटी कम मंत्री के कोर्स में थे। वो जगह याद रख हम गए। दूर एक गांव में जाकर पूछा, 'भाई, यहां दीया क्यों होता है? यह क्या है?' गांव के लोगों ने कहा, यहां सांठ-सत्तर साल पहले एक साधु की समाधि थी। तब पक्का हुआ कि यहां ज्योति समाधि है। जहां कभी-कभी दीये जलाये जाते हैं। हमें मानना पड़े। हम अपनी समाधियों पर ज्योत जलाते हैं वह समाधि नहीं तो क्या है? हम दीया या एक अखंड ज्योति रखे वह ज्योति समाधि है।

पांचवीं धूप समाधि है। समाधि पर धूप होता है। आपके आशीर्वाद से इस साधु को यह अनुभव है। तलगाजरडा में बचपन में कई बार जीवणदासबापू की समाधि पर देखा है! उस समय साधुओं के पास गूगल नहीं था। ऐसी परिस्थिति में साधु सदाव्रत और ठाकोरजी की अखंड सेवा करते थे। कोई धूप कर जाय यह असंभव था। फिर भी समाधि पर धूप होता था! हम दौड़ते! परिवार की बहनें घूंघट निकाल दौड़े! श्रद्धा हो तो समाधि पर धूप होता है। हमें संकेत मिले धूप समाधि से। छठ्ठी चेतन समाधि। वहां कुछ है। हमें लगे, चैतन्य है। कोई सांस ले रहा है। अपने यहां ऐसी अनेक समाधियां है। सातवीं जीवित समाधि है। बचन दे दिया फिर स्थिर रहना पड़े वह जीवित समाधि है। बीच में योगशास्त्र को लूं। योगशास्त्र की आठवीं समाधि को निर्विकल्प समाधि कहते हैं। कई पायदानें चढ़ने के बाद भी मार्ग कठिन है। इसमें अपनी हैसियत नहीं! पर इसका नाम स्मरण करना चाहिए। पतंजलि आदि योगसूत्रों ने आचार्यों ने निर्विकल्प समाधि कही है।

नववीं वचनसमाधि है। जिसे भागवतकार समाधि भाषा कहते हैं। 'भागवत' का ग्रंथ समाधि भाषा में आया कि व्यासजी समाधि की भाषा में बोले हैं। उसे मैं वचन समाधि इसीलिए कहता हूं क्योंकि समाधि बोलती है। समाधि कभी-कभी हमें प्रतिध्वनित करती है। कभी खड़े कर जनमोंजनम की आवाज़ सुनाई देती है। ऐसे वचन हमें कोई न कोई दे जाता है। उस समय के गेबी संकेत को मैं वचन समाधि कहता हूं। कई समाधियों मैं सभी वस्तु एक साथ रहती है। धूप भी हो, ज्योति भी हो, जीवित भी हो, चेतन भी हो और वचन समाधि भी हो। अखंड भी हो; शिव समाधि भी हो।

यह देश और उसमें भी कच्छ-सौराष्ट्र-गुजरात समाधियों से समृद्ध है। लोगों की आस्था है। उन्हें समाधि का इतिहास नहीं जानना। उनके चमत्कार भी नहीं जानने हैं। उन्होंने क्या-क्या चमत्कार किए यह भी नही जानना है। यहां कुछ है। साहब, जिसने पूरी पाटोत्सव की सेवा स्वीकार की है उनके साथ आई बेटी इंग्लीश में ही बोलती है। गुजराती ज्यादा नहीं समझती। वह मुझे कहे बापू, हमारे यहां परंपरा में हम दंडवत् करे तब यों सिखाते कि आपको हाथ यों रखने हैं और मैंने इस ओर देखा है कि सभी प्रणाम करते हैं तब हाथ यों करते हैं। मैंने कहा, बेटा, मुझे ज्यादा पता नहीं पर जिस परंपरा की बात करती हो उसमें मांगने की परंपरा है। हमनें लकडी की तरह दंडवत् किए पर हमें कुछ लेना है। हमारी परंपरा है हाथ नीचे रखने की। तू एकबार हमारे सामने देख ले। यही इच्छा है। इसीलिए हाथ हम यों रखते हैं। तूने हमें मनुष्य देह दिया इतना पर्याप्त है। बाकी हम हाथ नीचे रख मांगे नहीं। कोई साधु मांगनेवाला है ही नहीं। मैं किसीका बुरा न बोल सकूं साहब! पर जो साधु को भिखारी कहेगा, यह बड़ा अपराध करता है! जिसके पास कुछ न हो फिर भी सदाव्रतों के व्रत अखंड रखे उसे भिखारी क्यों कहे? मैं बारबार बोला हूं। मूल्यवान डाकू की प्रशंसा तो मेघाणीभाई ने भी की है। हम भी करे। डाकूगीरी के नाम पर जो लूंटमार करे और ज्यों-त्यों फिरते हो उसे भी रोटी मिलती हो तो साधु की पीढियां तो भजन करके आई है, तो क्या उनको रोटी न मिले? हम कितनी रोटियां खिलाते हैं? भिखारी नहीं है। हम हाथ यों नहीं, यों रखते हैं। मांगते नहीं। उसे नीचा न देखना पडे अत: यों आधार देते हैं। तेरा व्यर्थ न जाय। तू कुछ डाले और गिर न पडे अत: उसे प्रोत्साहित किया जाय। क्या जानकी भिखारीन है? वह तो जगदंबा है।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं ।

उस सितारे मांगने का तो सीता का बहाना है। परछाई भी जानकी की है। जैसे-तैसे तत्त्व की परछाई नहीं है। उसे पता है, हनुमान उपर से मुद्रिका डालनेवाले हैं। उसकी मुद्रिका नीचे न गिर पड़े अत:

अवनि आवत एकउ तारा ।

यों दोनों हाथ उपर रखे हैं। मांगने के लिए नहीं। पर वह व्यर्थ न जाय उसे पकड़ने के लिए, उसकी शोभा बढ़ाने हाथ उपर रखे हैं।

तो यह नौ-नौ प्रकार की समाधियों के लक्षण हमारे यहां हैं। यह बेटी पूछ रही थी कि हाथ यों कैसे? मैंने कहा, हम यों मांगने का सिखाते नहीं। फिर भी आता ही रहता है। हमारा भईलुभाई कहता था कि बापू, हमनें सोचा था कि इतनी सब्जी लानी पड़ेगी पर पता नहीं कुछ लेना ही नहीं पड़ता! सब आ जाता है! समुद्र किसीको आमंत्रण नहीं देता साहब! फिर भी नदियां बहती ही रहती है। नदियां इसमें समा जाती है। साधु परंपरा में जिन्होंने साधुता स्वीकार ली है, जो साधु होने का खूब प्रयत्न करता है, उनकी परंपरा में समाधियों का स्थान बहुत बड़ा है। और एक समाधि दूसरी समाधि की आरती उतारती है। मुझे मेकरणदादा बहुत पसंद है। मेकरणदादा के मूल स्थानों में मैंने कथाएं की है। मुझे आनंद हुआ कि महापुरुषों ने कैसी-कैसी बातें बताई है! इन सबकी वंदना करने की इच्छा होती है साहब! इसलिए यह सब है। मैं सभी उपक्रमों में बार-बार कहता हूं, चलेगा तब तक चलेगा, नहीं तो बंद हो जाएगा। यह जड परंपरा तो है नहीं। न हो तो न हो। फिर किसी को लगे, हमारे स्थान तो बाकी है और यह बंद हो गया! रह गया सो रह गया! पहले से तैयारी रखनी चाहिए। रोटी चालू रहनी चाहिए। क्योंकि यह सदाव्रत है। अवोर्ड सदाव्रत नहीं साहब! सदाव्रत वो है जिसकी ज्योति चालू रहनी चाहिए। जीवित समाधियों के भाव चालू रहने चाहिए। चेतनाएं चालू रहनी चाहिए।

विशेष नहीं कहते मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आप सब पधारते हैं तो मैं प्रसन्न होता हूं। आप आए; मैं भी सब जगह जाता हूं। खुशी होती है। आप न आए तो मैं मन को मनाउं कि व्यस्त होंगे। हम कार्यभार से बंधे हैं। आप हमें खुश करने आते हैं इसका आनंद है। भगवान ऐसा ही रखे तो अगले साल मिलेंगे। विशेष न कहते जो समाधियों की एफ.डी. की है उसमें हम ज्यादा न रखे तो कोई बात नहीं पर एफ.डी. न टूटे उसका खयाल रखना। वे जो भजन-तप छोड़ गए उसमें कुछ और न डाल सके तो कोई चिंता नहीं पर घटना नहीं चाहिए। सदाव्रत कायम चलते रहने चाहिए। मेरा पूर्ण विश्वास है यहां। मेरे लिए तो चेतन समाधि भी ये, सहज समाधि भी ये, शिव समाधि भी ये, ज्योति समाधि भी ये, गंधसमाधि भी ये। और वचन समाधि मेरे त्रिभुवनदादा। उनसे प्रेरणा प्रत्यक्ष-परोक्ष प्राप्त होती रहे। साहब! मौज में रहते हैं। मैं आपको सूचन न कर सकूं। मेरी हैसियत भी नहीं। मेरे स्वभाव में नहीं है। पर इन स्थानों की एकता बनी रहे। आज परस्पर झगडे होते हैं उससे दूर रहे।

मैं अभी एक विशेष कार्यक्रम में होकर आया। दो जगह होकर आया। तभी भी कहा था कि मूल को पकड़कर रहिए। डाली पर लोग श्रद्धा के नीड बनायेंगे। ग्रामीण जगहों की एकता बनी रहे। हम समाधियों से जुड़े हैं। हम छोटे-बडे मतभेद और उपाधियों से जुड़े है। इन ग्रामीण जगहों पर मैंने जहां-जहां कथाएं की है; देखिये तो सही, समाधियों के प्रताप से कैसे उत्सव हुए! पिछली बार भाणबापू के तीर्थ में से आकर हां कही। दिमाग से पालियाद निकलता नहीं! अगली बार किसी जगह कथा कर वापिस आउं!

मेरे लिए तो रामकथा ही सदाव्रत है। मैं उपवास नहीं करता। मौन मेरा सहज व्रत है। बोलूं तब भी मौन रहता हूं साहब! बोलना तो उपर का होता है। बाकी तो भजन, रामकथा। मुझे समाधि ही दिखाई देती है। ज्योत के सिवा कुछ नहीं दिखाई देता। खबरदार! इसमें झूठे चमत्कार या पर्चे डाले है तो! मैं हृदयपूर्वक कहूं। सेंजल प्रति आदर है वह अपना है। समाधि के प्रति भी आदर है। एक विदेशी मिलने आए। कथा में भी एक शिक्षित ने चिठ्ठी भेजी, 'इन समाधियों में सोये हुए कब जागेंगे?' उसने तुझे जगाया, उसे सोने दे! तू अमरिका से यहां आया है! जवाब दिया था कि उसने तुझे जगाया नहीं, तो तू सोया हुआ था! और तू मरुभूमि में क्यों आया? वे सोये हुए हैं; जिस दिन खड़े होंगे उस दिन पूरा ब्रह्मांड डोल जायेगा! उसे नूर लगने पर बैठेगा। वे नींद में नहीं है। ये कैसी जीवंत समाधियां है! समाधियों के गौरव का हम जतन करे। आप सब पधारे। सबको हार्दिक प्रणाम। हमारी आंखें गीली रहे। समाधि की ज्योति में घी के दीये नहीं, आंसू के दीये होंगे। घी तो गाय दूध न दे तो डेरी से लाना पड़े। घी शुद्ध नहीं होगा तो तड़-तड़ होगा! एक शे'र है -

हंसने के बहाने भी आंख भीगी होनी चाहिए ।
बहुत देर तक आंख में वेरान न रहना चाहिए ।

लंबे समय तक आंख में वीरानी नहीं होनी चाहिए। हमारे आंसू ही इस ज्योति को प्रज्वलित रखेंगे। अभी साधुओं का काल है। यह कलियुग नहीं है, साधुओं का काल है, स्थानों का काल है साहब! दो किनारों पर सभी स्थान है! दाता दो रूम की जगह पांच रूम बना देते हैं। पर ये हमें सिमेन्ट की ट्रक गिनने पर विवश न कर दे इसका ध्यान रखें! वर्ना दाता कहे, 'बापू, ये ट्रक आप गिनते रहे और ए.सी.के बिल भरते रहे! भजन न चुके यह बहुत जरूरी है। आप सबको प्रणाम।

(पूज्य ध्यानस्वामीबापा ट्रस्ट, सेंजलधाम में 'ध्यानस्वामीबापा अवोर्ड-२०१७' अर्पण अवसर पर प्रस्तुत वक्तव्य: दिनांक १०-२-२०१७)

सांध्य-प्रस्तुति

संतवाणी-प्रस्तुति : श्री हेमंत चौहाण, श्री निरंजन राज्यगुरु

श्री नरोत्तम पलाण

श्री दलपत पढियार

संतवाणी-विमर्श : श्री नीतिन वडगामा, श्री दलपत पढियार, श्री नरोत्तम पलाण

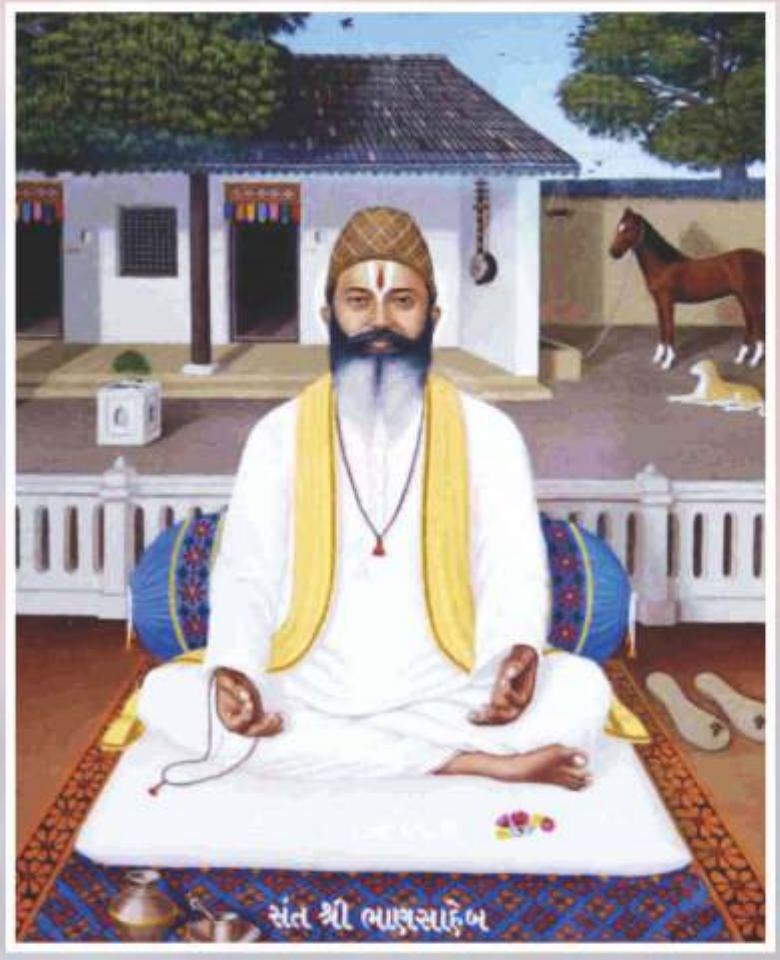

भाण कहे भटकीश मा, मथी जोने मांय,
समजीने तुं सूई रहे तो, करवानुं नथी कांय।

॥ जय सीयाराम ॥